अग्निस्थापना।

कोई कोई सम्प्रदायी मनुष्यलोगों अग्निस्थापना, अग्नि के विवाह आदि दशविध संस्कार करके यज्ञादि करते हैं, अज्ञान के वश होकर उनलोग दशविध संस्कार न करके कभी ही यज्ञादि नहीं करते। शास्त्र में लिखा है कि "अग्निर्गुरु-र्द्विजातीनां" अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय वो वैश्य द्विजाति के गुरु अग्नि हैं। "अग्निमुखे न खादन्ति देवा:" इसके अर्थ देवगण अर्थात् ईश्वर परब्रह्म अग्निमुख से आहार करते हैं। आपलोग विचार करके देखिये जब अग्निदेव द्विजाति के अनादि गुरु हुयें, तब सामान्य मनुष्य होकर अपने इष्ट गुरु को स्थापना विवाह, जन्म, मृत्यु प्रभृति दशविध संस्कार देना किस प्रकार से सम्भव होगा।

अग्निब्रह्म आपलोगों को लेकर भितर बाहर में निराकार निर्गुण साकार सगुण अप्रत्यक्ष प्रत्यक्ष भाव से आध्यात्मिक अग्नि, ज्ञानाग्नि, भौतिक अग्निरूप अनादि काल से पूर्णरूप विराजमान हैं। आध्यात्मिक अग्नि निराकार भाव से विश्व-ब्रह्माण्ड में व्यापि हैं, ज्ञान अर्थात् स्वरूप बोध न होने से उन्हीं को जानने वा समुझ ने नहीं सके हैं। यही ज्ञानाग्नि रूप से प्रत्यक्ष विराट चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योति:स्वरूप ब्रह्माण्ड प्रकाश किये अनादि काल से विराजमान हैं। और इन्हीं स्त्री पुरुष सकल को अन्तर में प्रेरण करके व्यवहारिक वो पारमार्थिक उभय कार्य्य चेतन रूप से निष्पन्न करते हैं और कराते हैं। इन्हीं भौतिक अग्नि रूप से विराजमान हैं, इन्हीं

के द्वारा आपलोग व्यवहारिक वो पारमार्थिक कार्य्य करते हैं। यही अग्निब्रह्म तारागण चन्द्रमा वो विद्युतरूप से आकाश में और उदर में जठराग्निरूप से वो वाहर में अनलरूप से और चन्द्रमा सूर्यनारायण विराट ब्रह्म रूप से चराचर को लेकर अन्तर वो वाहर में प्रत्यक्ष पूर्ण सर्व्वशक्तिमानरूप विराजमान हैं। इनके स्थापन विवाह, जन्म, मृत्यु, प्रभृति दशविध संस्कार किस प्रकार से सम्भव होता! इन्हीं चराचर स्त्री, पुरुष मनुष्य मात्र ही का गुरु हैं। इन्हीं आपलोगों का सृष्टि पालन, वो लय कारी और इन्हीं ज्ञान प्रदान करके मुक्त स्वरूप परमानन्द में रखते हैं। आपलोग इन के वस्तु इन्हीं को भक्ति श्रद्धा के संग आहुति प्रदान करने हो से वह प्रसन्न होकर ग्रहण करेंगे कारण "भावग्राही जनार्द्दन"। पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप अग्नि-ब्रह्म को भक्तिपूर्व्वक आहुति प्रदान करने से वह पूर्ण भाव से ग्रहण करते हैं। जैसे माता पिता को पुत्र कन्या श्रद्धा भक्ति पूर्व्वक भोजन के द्रव्य थाली में सजाकर उनलोगों के सम्मुख विना मन्त्र प्रदान करने से भी माता पिता प्रीतिपूर्व्वक भोजन कर लेते हैं। कारण माता पिता चेतन हैं, भाव समुझते हैं कि पुत्र कन्या भोजन करने के लिये यह सकल द्रव्य दिये हैं। तैसे अन्तर्यामी पूर्णपरब्रह्म ज्योतिः स्वरूप अग्नि ब्रह्म माता पिता को आपलोग ब्रह्माण्ड के चराचर पुत्र कन्या स्त्री पुरुष श्रद्धा भक्ति पूर्व्वक आहुति के द्रव्य ओंकार मन्त्र पढ़के अथवा विना मन्त्र से आहुति प्रदान करने से भी वह ग्रहण करेंगे। कारण वह चेतनमय समस्त ही समुझते हैं। जिनकी चेतन शक्ति से आपलोग चेतन होके समुझ सक्ते हैं वह

क्या समर्पण नहीं सकें ? आहुति देने के समय श्रद्धा वो भक्ति पूर्व्वक बोलेंगे कि हे अन्तर्यामिन् ! पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप भगवान् जगत के पिता माता गुरु, हमलोग आप ही के वस्तु आप को भक्ति श्रद्धा पूर्व्वक प्रदान करते हैं आप अनुग्रह करके प्रीतिपूर्व्वक ग्रहण करिये, जब हमलोग एक सामान्य तृण घास पर्य्यन्त उत्पन्न करने नहीं सक्ते हैं तब हमलोगों का कौन सा वस्तु है कि आप को दें आप ही तो जगत चराचर को नाना-प्रकार द्रव्य देकर पालन करते हैं । हे अन्तर्यामिन् गुरु माता पिता अपने गुणों से कृपा करके आप के वस्तु आप ही ग्रहण के द्वारा हमलोगों को कृतार्थ करिये ।

यज्ञाहुति समाप्त होने से "ओं शान्ति" यही मन्त्र तिन बार बोल के किञ्चित् जल अर्पण करके यज्ञ समाप्त करेंगे । उपरान्त निराकार साकार अखण्डाकार पूर्णपरब्रह्म को मन मन में श्रद्धा वो भक्ति पूर्व्वक पूर्णरूप से प्रणाम करके परमानन्द में आनन्दरूप रहेंगे । इसके सिवाये और अधिक आड़म्बर और अनेक प्रकार प्रपञ्च करनें का कोई भी आवश्यक नहीं है । अग्नि ब्रह्म चेतन ज्ञान स्वरूप हैं । वह अन्तर वो बाहर के सर्व भावों को ग्रहण करते हैं । वह शान्ति स्वरूप हैं, आपलोगों के मन का शान्ति और अपराध क्षमा के लिये ही शान्ति प्रार्थना करने होता है ।

क्षुधातुर जीव मात्र ही को अपने आत्मा वो परमात्मा का स्वरूप जानके आहार वो प्यासे को जल देकर आनन्द में रखना और अग्निब्रह्म में आहुति देना ज्ञानवान मनुष्य लोगों का उचित है । यही शास्त्र वेदों की मूल उद्देश्य है, और यही परमात्मा

की अज्ञा है । मनुष्य मात्र ही को यह पालन करना उचित है । और इस के पालन करने से निराकार साकार पूर्णरूप से सकल देव देवी का पूजा करना वो आहार देना होता हैं। यह निश्चय सत्य सत्य हो जानैंगे । जो निमित्त परमात्मा द्रव्यादि उत्पन्न कियें हैं, विचारपूर्व्वक सोई उद्देश्य में अनुष्ठान करना मनुष्यलोगों का उचित है, जिस में अपना वो दुसरे का किसी प्रकार भी कष्ट न होयें, तो परमात्मा कि अज्ञा पालन रूप धर्म्माचरण होता है। ऐसे न करने से परमात्मा का अज्ञा लङ्घन के लिये अधर्म्म होता है। और जगत का अमङ्गल वो कष्ट होता है, यह निश्चय जानैंगे ।

आहुति की मन्त्र प्रकरण ।

स्त्री वो पुरुष सकल अग्नि में नि्चे लिखो हुई मन्त्र बोल कर आहुति देंगे ।

"ओं वरदे देवि परमज्योतिः ब्रह्मणे स्वाहा" ।

"ओं चराचरब्रह्मणे स्वाहा"

"ओं पूर्णपरब्रह्म ज्योतिः स्वरूपाय स्वाहा"

एक एक बार स्वाहा बोलके एक एक बार आहुति देंगे । इसी प्रकार तिन बार वा पांचबार आहुति देंगे। जिनि क अधिक देंने का इच्छा होवे, वह अधिक दे सक्ते हैं। आहुति

देने का द्रव्य, गौ के घृत (अभाव वश) भैस के घृत वो मिष्ठान्न, गुड़, चिनि प्रभृति चन्दनादि नाना सुगन्ध वो किसमिसादि मेवा यह समस्त आहुति देंगे। यदि इस में कोई द्रव्य को अभाव हो तो जो मिल जावे वही यथाशक्ति आहुति देंगे। यह सब द्रव्य में से कोई द्रव्य न मिले, तो केवल घृत वो चिनि होने ही से होगा। भक्तिपूर्व्वक जो आपलोग के जुटजावे वही भगवान के नाम में आहुति देंगे। अज्ञान मनुष्य अपने भोजनके वस्तुयों में से आहुति दें तो वह भी प्रीतिपूर्व्वकग्रहण करेंगे।

काष्ठ सम्बन्ध में आम्र वो वेल काष्ठ मिलें तो उत्तम है, न तो जो देश में जोई काष्ठ मिले उसी के द्वारा कार्य्य निष्पत्ति करेंगे। और यदि यह भी न मिले तो कण्डा के अग्नि में आहुति देंगे। ईश्वर भावग्राही हैं, प्रीति वो भक्तिपूर्व्वक जो मनुष्य जो वस्तु देंगे वह उसी को प्रसन्न होकर ग्रहण करेंगे।

स्थान वो द्रव्यादि परिस्कार करके भक्तिपूर्व्वक कुण्ड में अथवा मिट्टी, पितल वा ताम्र के धुनाचि में प्रात: वो सन्ध्या के समय आहुति देंगे। अथवा भक्तगणों के जिस समय सुविधा वा इच्छा होगी, तिसी समय में आहुति देंगे, तिस में कोई चिन्ता नहीं है। अपने भोजन के पूर्व्व में आहुति देना ही श्रेष्ठ है।

प्रार्थना।

प्रात: याँ, सन्ध्या में अथवा अवसर मत मनुष्यमात्रही जगत माता पिता विराट पूर्णपरब्रह्म ज्योति: स्वरूप के सम्मुख में या

घर के भितर वा वाहर में अथवा जो स्थान वा विछौने पर श्रद्धा भक्तिपूर्व्वक नम्र भाव से करजोर के निम्नलिखित प्रकार से प्रार्थना करेंगे।

हे पूर्णपरब्रह्म ज्योति:स्वरूप जगत के माता पिता गुरु आत्मा, आपही निराकार निर्गुण हैं, आपही साकार सगुण त्रिगुणात्मा जगत चराचर लेकर पूर्णरूप से प्रत्यक्ष विराजमान हैं। आपही अद्वैत आपही द्वैतरूप से भासते हैं, आपही मङ्गलमय मंगलस्वरूप, कारण, सूक्ष्म, स्थूल विराट ज्योति: रूप से प्रकाशमान हैं, आप को पूर्णरूप से वारम्बार प्रणाम करते हैं। हे अन्तर्यामीन पूर्णपरब्रह्म ज्योति:स्वरूप गुरु आप ही जगत के माता पिता गुरु आत्मा हैं, आप अमृतस्वरूप शान्तिमय हैं! हमलोग विषय भोग में आसक्त होकर आप को भुले रहते हैं, आप जो कौन हैं वह हमलोग चिन्हने वा जानने नहीं सक्ते: कारण हमलोगों निज में जो कौन हैं हमलोगों का स्वरूप क्य है, वही जब हमलोग नहीं जानते, तब आप को किस प्रकार से जानेंगें वा चिन्हेंगे। यदि भी हमलोग आपको भुले रहते हैं, तथापि हे अन्तर्यामिन्! आप अपने गुणों से हमलोगों को न भुलेंगें। आप अपने गुणों से हमलोगों का सकल अपराध क्षमा करके परमानन्द में अनन्दरूप रखिये आपको हमलोग पूर्णरूप से बारम्बार प्रणाम करते हैं।

हे अन्तर्यामिन्! ज्योति:स्वरूप हमलोग योग तपस्या उपासना ध्यान, धारणा भक्ति वो श्रद्धा कुछ भी नहीं जानते, जिस से आप को जानने वा चिन्हने सकें, आपही हमलोगों की योग तपस्याऽउपासना ध्यान धारणा भक्ति वो श्रद्धा हैं, हमलोंगो

का क्या सामर्थ है कि हमलोग पुरुषत्व के द्वारा आप को प्राप्त होने वा चिन्हने सके। हे अन्तर्यामिन! हमलोग तो चाहते हैं कि, क्षुदा तृष्णा न होये स्थूल शरीर वा मन में कोई प्रकार का दुख कष्ट न होये, दिन वा रात्र न होये, हमलोगों का निद्रा अज्ञानता न आवे वर्षा शीत ग्रीष्म न हो, परन्तु हे अन्तर्यामिन! ज्योतिः स्वरूप गुरु माता पिता आत्मा हमलोगों का इच्छायों से कुछभी न होता, आपके इच्छायों से जिस समय जों होने का है उसी समय होता है। यदि हमलोंगो का इस विषय मे कुछ भी सामर्थ्य रहता तो अवश्य ही इस के प्रतिकार कर सके। हे अन्तर्यामिन! पूर्णपरब्रह्म ज्योतिः स्वरूप गुरु माता पिता आत्मा यदि हमलोगों के द्वारा पूर्व्व वो वर्त्तमान अथवा भविष्यत् काल में ज्ञान वा अज्ञान वशत: कोई भी अपराध किये होंये वा करें आप तोभी अपने ओर से हमलोगों का सकल अपराध क्षमा करके हमलोगों को परमानन्द में आनन्दरूप रखिये और शान्तिविधान करिये, हे अन्तर्यामिन्! आप मङ्गलमय मङ्गल करिये आप को पूर्णरूप वारम्वार प्रणाम करते हैं।

हे अन्तर्यामिन्! हमलोग आप के शरणागत हुयें आप आपने गुणों से जैसे पुत्र कन्या माता पिता के निकट अपराध करने से भी माता पिता अपने गुणों से उनलोगों का सकल अपराध क्षमा करके पुत्र कन्या को मङ्गल चेष्टा करते हैं, तैसेही आप जगत के माता पिता हैं आप अपने गुणों से चराचर हमलोगों का सकल अपराध रहते भी क्षमा करके हमलोगों को शान्ति विधान करिये और जिस में

सभी आनन्दरूपसे काल अतिक्रम कर सकै उस्को उपायकर दिजिये।

हे अन्तर्यामिन्! ज्योतिःस्वरूप गुरु माता पिता आप के सिवाये इस आकाश में और द्वितीय कौन हैं कि चराचर हमलोगों का सकल अपराध चमा करके मङ्गल विधान करेंगे, आप क्रपा करके शान्त छोड़ये और हमलोगों को शान्तिविधान करिये। आप तो अनादि शान्ति स्वरूप हैं। हमलोगों को अज्ञान मोचन पूर्व्वक मन पवित्र करके शान्ति दिजिये जिन से हमलोगों मुक्तिस्वरूप परमानन्द में आनन्दरूप रह सके। आप को हमलोग वारम्वार पूर्णरूप से प्रणाम करते है।

ओँ शान्तिः। ओँ शान्तिः। ओँ शान्तिः।

अग्नि के विषय।

ओंकार मङ्गलकारी वैश्वानर अग्नि सर्व्वप्रकार हितकारी हैं। इन्हीं सर्व्वप्रकार से हित करते हैं। एकही अग्निब्रह्म चन्द्रमारूपसे सर्व्वप्रकार ब्रह्माण्ड के सुख वो धन इत्यादि देते हैं। सूर्य्यनारायणरूप से जीव समस्त को ज्ञानमुक्ति दे कर पारमार्थिक व्यावहारिक दोनों कार्य्य सिद्ध करते हैं। विद्युत् वो तारारूप से सर्व्वप्रकार ब्रह्माण्ड के हितसाधन करते हैं। सर्व्वशास्त्रके सार वेद में उक्तहुई हैं कि, "अग्निमिले पुरोहितं यज्ञस्य देवम् ऋत्विजम" अर्थात अग्निही सर्व्वकार्य्य में अग्रवर्त्ती यज्ञ के ऋत्विक लो देवता हैं। और यही ज्ञानके फल में वैदिक युग से मङ्गलकारी वैश्वानर अग्निब्रह्म ही को पुरोहित

रूपसे ग्रहण करके सभी आनन्दसे कलातीत करते थे, किसी विषयका अभाव नहीं था। परन्तु आधुनिक युगमें अग्निब्रह्म पुरोहितको त्याग करके सामान्य स्वार्थपर अज्ञानी अहितकारी तृष्णातुर प्रपञ्ची मनुष्य जगत की सर्व्व का पुरोहित हुये हैं। इसलिये आजकल हिन्दुगण सर्व्वविषय ही में तेज हीन, वुद्धिहीन, ज्ञानहीन, परस्पर हिंसाद्वेष के वश नानाप्रकार कष्ट भोग करते हैं। अभी भी यदि सव कोई प्रकृत मङ्गलकारी ओंकार बैश्वानर अग्निविराट ब्रह्मज्योतिःस्वरूप चन्द्रमासूर्य्य-नारायण के निकट क्षमा भिक्षा मांगकर जगतके हितसाधन में प्रवृत होते तो मङ्गलकारी ओंकार पुरोहित ज्योतिःस्वरूप सकल अमङ्गल दूर करके सर्व्वप्रकार से मङ्गल विधान करेंगे, जीवगण आनन्द सुख में रहेंगे यह ध्रुव सत्य सत्य जानेंगे।

अज्ञानावस्थापन्नमनुष्य शास्त्रके सारभाव न समुझके अग्नि-ब्रह्मको सामान्य वोधकर कहते हैं कि, अग्निब्रह्म तृणघास भस्मकर नहीं सक्ते, ब्रह्मही भस्मकर सक्ते हैं। परन्तु इस जगह पर गम्भीर को शान्तचित्त से सारभाव ग्रहण करना उचित है कि, अग्नि या ब्रह्म किस्को कहते हैं। इस आकाश मन्दिर में जव एक सत्य सिवाय द्वितीय सत्य नहीं हैं, तव कौन किस्को भस्मकरेंगी ? मिथ्या सत्यको भस्म करेंगे न सत्यमिथ्याको भस्म करेंगे ? अथवा मिथ्या मिथ्याको भस्मकरेंगे, या सत्य सत्यको भस्मकरेंगी ? जव "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" या एक सत्यभिन्न द्वितीय सत्य नहीं हैं, तव अग्नि, ब्रह्म वो तृण द्वितीय सत्य या मिथ्या कहांसे आये थें, जो भस्मकरेंगे या भस्महोंगे या भस्मिकार नहीं सकेंगे ? जो भस्मकरेंगे वह मिथ्या न सत्य ? जो भस्मकर

नहीं सकेंगे, वह मिथ्या न सत्य? यदि कोई मन्त्रों करें कि मिथ्या, तो मिथ्या मिथ्याही है भस्महोगा क्या? सत्य कैसे भस्म होंगे, या कैसे, किसको भस्म करेंगे? द्वितीय सत्य होकर द्वितीय सत्यको भस्मकरेंगे?

जब स्वयं स्वतः प्रकाश एकही सत्यनिराकार साकार या कारण, सूक्ष्म स्थूल, चराचर, स्त्रीपुरुषको लेकर असीम अखण्डाकार निर्व्विशेष पूर्णरूपसे विराजमान हैं तब अग्निको अग्निकी दहिका शक्ति यह द्वितीय सत्य हैं अथवा एकही सत्य हैं? यदि निराकार ब्रह्म को कहिये कि, "हे निराकार ब्रह्मआप एक तृणभस्मकरके निराकार करिये तब निराकार रूपसे कभी भी तृणको भस्म या निराकार नहीं करेंगे। वह साकार तेज अग्निरूप हो केही तृणको रूपान्तर सा भस्मकरके निराकार कारण में स्थित होंगे। तब वह निराकार रूपसे भस्मकर नहीं सक्ते कहकें क्या वहनीच होते हैं या उनकी मान्य गई? और जब वह साकाररूपसे भस्म किये, तब क्या वह उच्चहुये या उनकी मान्य हुई?

ब्रह्मनिराकार साकार दोनों भाव वो संज्ञा लेकर पूर्णसर्व्व शक्तिमान हैं, उनकी शक्ति उन्हींके रूप मात्र हैं, उन्हीं से पृथक नहीं हैं। नीच उच्च जो शक्तिद्वारा जो कार्य्यनिष्पन्न करने का प्रयोजन होता हैं, वह उसी शक्तिद्वारा उसी कार्य्य सम्पन्न करते हैं वो कराते हैं। समस्त ही उनकी इच्छाधीन है। जैसे आप अपने इच्छानुसारसे अपने अङ्गुलि या भोजन की द्रव्य चिवा सक्ते हैं वो नहीं कर सक्ते हैं—आपकी इच्छा।

शक्तिकी मान्यसे ब्रह्मकी मान्य है, शक्ति की अपमानसे ब्रह्मकी

अपमान है । ब्रह्मकी शक्तिरूपी अग्नि या अग्निकी दाहिका शक्ति भस्मकरे या न करे ब्रह्महीका मान्य या अपमान है ।

शास्त्रमें कहते, "अग्निमुखे देवः खादन्ति" इसको सार मर्म्म यह है कि, एक सत्य ब्रह्महो जगत नाना नामरूपसे भिन्न भिन्न भासना रहते भी जो वही हैं । किसीकं भी भस्म या मिथ्या करने का सामर्थ नहीं है । केवल ब्रह्महो अग्निरूप होकर तृण या ब्रह्माण्ड नाना नामरूप को रूपान्तर भस्मकरके अपने कारणरूप से स्थित होते हैं । तृण या जगत जीव समस्त भस्म या मिथ्या नहीं होते, केवल रुपान्तर होते हैं, निराकार से साकार साकार ते निराकार । जैसे जाग्रत से सुषुप्ति, सुषुप्ति से जाग्रत । जाग्रतावस्थापन्न मनुष्य सुषुप्ति के अवस्था में मिथ्या या भस्म नहीं होते, फिर सुषुप्ति के अवस्था मनुष्य जाग्रतावस्था में ज्ञानका कार्य्यकरते हैं, मिथ्या या भस्म नहीं होते । गंभ्रो रवो शान्तचित्त से ऐसे ही सर्व्वविषयके भावग्रहण करने होता है, वृथा मिथ्याविचार करना नहीं होता ।

ओं शान्तिः ! ओं शान्तिः ! ओं शान्तिः !

परमात्मा ज्योतिःरूप से बहु विस्तार ।

कोई कोई चिन्ता करते वो कहते हैं कि, सूर्य्यनारायण के सदृश अनन्त ब्रह्माण्ड में अनन्त सूर्य्यनारायण हैं । तव इष्ट देवता जगन्माता पिता गुरु को यही सूर्य्यनारायण रूप के प्रका-शित है बोलकर क्यों मानेंगे, इनसे जो श्रेष्ठ वो बड़े हैं उन्हीं को

मानेंगे। वे बात कितने दूर अन्याय वो मूर्खता और असङ्गल-कर है। वह कही नहीं जाती, कारण प्रजालोग जो राजा के राजत्व में वास करते हैं, वही राजा के आज्ञा उनलोगों को अवश्य ही पालन करना होगा वो पालन करना उचित है। प्रजागणों को ऐसा मनमें करना वा कहना उचित नहीं है कि जो राजा के राजत्व में वास करेंगे, उन्हीं के आज्ञा पालन वा उन्ही को राजा बोलकर नहीं मानेंगे, कारण यही राजा के मत अनेक ही राजा हैं। यदि प्रजालोगों ऐसे मनमें करें तो यह भी उनलोगों को मन में रखना उचित है कि राजा अपने प्रजा पर जो इच्छा वही कर सक्ते हैं। और राजा के हात में प्रजा का सुख दुःख निहित है कारण राजा स्वाधीन है। वैसे ही प्रजा रूपी यह ब्रह्माण्ड में, स्त्री पुरुष, मुनि ऋषि, अवतारगण प्रभृति हैं और राजारूपी पूर्णपरब्रह्म ओंकार विराट चन्द्रमा सूर्य्यनारायण हैं इन्हीं ब्रह्माण्डके राजा गुरु माता पिता आत्मा वो सर्व्व मङ्गलकारी हैं। इन के सिवाये इस आकाश में आपलोगों के द्वितीय राजा कोई भी नहीं हैं, हुये नही होंगे भी नही, और होने का सम्भावना भी नही है। इन्हीं एकमात्र आपलोगों के सुख दुःख दाता हैं, सृष्टि स्थिति नाश कर्त्ता वो विधाता हैं, इन्ही को तान्त्रिकगण प्रकृति पुरुष कहते हैं, और श्रीवैष्णवगण युगलरूप कहते हैं। परमात्मा पूर्ण सर्व्वव्यापी असीम अखण्डाकार से रहकर एक एक ब्रह्माण्ड में चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप राजा होकर अनादि काल से जगत के सृष्टि स्थिति वो लय कर रहे हैं। ज्योतिः के प्रकाश अल्प देखकर ब्रह्माण्डस्थ रूप स्त्री पुरुष लोगों का अहङ्कार पूर्व्वक कहना

उचित नहीं है कि, यही विराट ब्रह्म चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योति:स्वरूप राजा को नहीं मानेंगे, कारण इस प्रकार ज्योति: राजा एक एक ब्रह्माण्ड में एक एक राजा हैं, यह हमलोगों का ईश्वर नहीं हैं। हमलोगों का प्रकाण्ड और अत्यन्त वड़े ईश्वर हैं। यह छोटे हैं, इन्हीं को ईश्वर वोलकर नहीं मानेंगे, इन्हीं को अपमान करने होगा। ऐसे मन में करना अज्ञान के कार्य्य है। एक दृष्टान्त के द्वारा इस वात को सहज में समुझा जायेगा। जैसे आपके माता पिता किसी घर के दरोजा वन्द करके खिरकी से आपको देखते हैं। माता पिता के नेत्र मात्र आपका दृष्टि में आता है। वे अवस्था में यदि आप प्रीति भक्ति पूर्व्वक माता. पिता के नेत्र का सामने पूर्णभाव से प्रणाम करिये या अपमान करिये अथवा घुसा देखाइये, उसमें माता पिता का क्षुद्र नेत्र मात्रसे न, स्थुल सूक्ष्म अङ्ग प्रत्यङ्गादि लेकर पूर्ण रूप से प्रसन्न या अप्रसन्न होते ? अन्धे माता पिता के काण में कुवचन या भक्तिपूर्ण सम्भाषण करने से माता पिता क्या क्षुद्र काण मात्र से, न, पूर्णरूप से प्रसन्न या अप्रसन्न होके पुत्र कन्या के मङ्गलामङ्गल करते ? अन्धे वहिरे माता पिता के नासिका के छिद्र में सुगन्ध या विष्ठादि के दुर्गन्ध देने से माता पिता नासिका मात्र से न पूर्णरूप से प्रसन्न या अप्रसन्न होते ? पूर्णपर-ब्रह्म ज्योति:स्वरूप माता पिता हैं। आपलोग जगतवासी स्त्री पुरुष जीव मात्र पुत्र कन्या हैं। अज्ञान के वश आप उनको पूर्णरूप से देखने नहीं पाते, उनके ज्योति:रूप नेत्रही आपलोग के निकट प्रकाशमान हैं। उसी नेत्र के सामने यदि आपलोग पूजा या अपमान करिये अथवा उनके आकाशरूप काण में स्तुति

या निन्दा करिये अथवा उनके निश्वास प्रश्वास रूप वायु में सुगन्ध या दुर्गन्ध संयुक्त करिये ; उसमें वह क्या एक एक अङ्ग मात्र से क्रोध या प्रीति होते या कारण सूक्ष्म स्थूल चराचर स्त्री पुरुष जीव मात्र को लेके असीम अखण्डाकार पूर्णरूप से प्रसन्न या अप्रसन्न होके जगत के मङ्गल या अमङ्गल करते हैं ?

और भी विचार पूर्व्वक समुझाना उचित है कि सूर्य्यनारायण जगत हितार्थ के लिये यत्किञ्चित् जो ज्योतिः रूप से प्रकाश हैं, उन्हीं के तेज कोई भी सह्य करने सक्षम नहीं हैं, यदि वह और भी अधिक ज्योतिः रूप से प्रकाश होंये तो समस्त जगत भस्म हो जायेगा।

ज्ञानवान मनुष्य को ऐसा मन में करना उचित नहीं हैं कि जल सकल स्थान में परिपूर्णरूप से विस्तृत हैं हम प्यास निवारण के लिये एक गिलास जल नहीं पियेंगे, अथवा अग्नि पूर्णरूप से असीम हैं, हम यत्किञ्चित् अग्नि द्वारा प्रकाश कर के घरके अन्धकार दूर नहीं करेंगे। इससें हमारा मान्य नष्ट होगा। यदि ऐसा मन में करके अल्प अग्नि द्वारा प्रकाश न करेंगे। अथवा एक गिलास जल के द्वारा प्यास निवारण न करिये तो मूर्खता के कारण आप ही कष्ट भोग करेंगे। तैसे ही अग्निरूपी विराट चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप परमात्मा अनन्त ब्रह्माण्ड में ज्योतिः रूप से विराजमान हैं। उसमें ज्ञानवान मनुष्य को ऐसा मनमें करना उचित नहीं है कि हमारे यत्किञ्चित् अज्ञानता यही चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिः स्वरूप के प्रकाश द्वारा लय नहीं करेंगे हमारे मान्य जायेंगी, हम समस्त ब्रह्माण्ड के पूर्ण असीम अखण्डाकार ईश्वर को जोड़

से पकड़ के ले आवेंगी, और हृदय में रखके अज्ञानता दूर करेंगी। विचारपूर्व्वक देखना उचित है कि यत्किञ्चित् अग्नि द्वारा समस्त ब्रह्माण्ड के स्त्री पुरुष ज्ञानि राजा बादसाह लोगों का शरीर भस्म हो जाता है तब यही ज्योतिः स्वरूप परमात्मा को अत्यज्ञान ज्योतिः के प्रकाश द्वारा समस्त ब्रह्माण्ड के स्त्री पुरुष लोगों का अज्ञान लय होगा इसमें क्या भय या सन्देह है।

हे मनुष्यगण! आपलोग क्यों वृथा अहङ्कार में परवश होकर जगत का अमङ्गल वो शान्ति पंथ में काटा होते हैं। अवही से समस्त मान अपमान, जय पराजय, सामाजिक स्वार्थ वो अहङ्कार परित्याग करके विराट पूर्णपरब्रह्म चन्द्रमा सूर्य्य-नारायण ज्योतिःस्वरूप मङ्गलमय के शरणागत होइये जिस से इन्हीं दया गुणों से जगत के समस्त अमङ्गल दूर करके मङ्गल स्थापना करें, और आपलोग सर्व्वदा सकल प्रकार से परमानन्द में आनन्दरूप रह सकें। यह निश्चय करके जानिये कि, यही चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिः स्वरूप जगत माता पिता व्यतीत इस जगत के अमङ्गल दूर वो दुःख मोचन कर्त्ता द्वितीय और कोई नहीं हैं, होंगे नहीं वो होने का सम्भावना भी नहीं हैं। जिन्को आपलोग सामान्य क्षुद्र ज्योतिः बोलकर मन में करते हैं। परन्तु वह क्षुद्र नहीं हैं वह निराकार अदृश्य भाव से और विराट साकार दृश्य भाव अखण्डाकार से विराजमान हैं। इन्हीं अपनी इच्छा से जगत के मङ्गल विधान वो कार्य्य निर्व्वाह के लिये निराकार से यत्किञ्चित् साकार ज्योतिः रूप से दृष्टि गोचर वो बोधगम्य होते हैं। ज्ञानी भक्त लोग ही परमात्मा

के कृपा से यह विचित्र लीला के मर्म्म समुझ सके हैं। साधारण लोगों ज्योतिः को बहु खण्ड खण्ड वो अल्पाधिक करके भिन्न भिन्न अनुभव करते हैं, परन्तु वह बहु वा अल्पाधिक्य नहीं हैं। अन्तर्गत एकही ज्योतिः निराकार से वाहर मुख पृथक् पृथक् बहु बोल कर बोध होते हैं। जैसे एक प्रकाण्ड ज्योतिः के उपर में छोटे बड़े असंख्य छिद्र विशिष्ट कोई पात्र आच्छादित करने से उसी छिद्र देकर असंख्य ज्योतिः के धारा बाहर मुख से दृष्ट गोचर होता है तो अज्ञान अवस्थापन्न मनुष्य लोग उसी ज्योतिः को भिन्न भिन्न असंख्य ज्योतिः बोध करते हैं। परन्तु ज्ञानवान् मनुष्य लोगों जानते हैं कि अन्तर्गत अग्नि ज्योतिः अखण्डाकार से एकही हैं, केवल पात्र के नाना छिद्र रूप उपाधि भेद से बाहर मुख भिन्न भिन्न बहु ज्योतिः बोल कर बोध होते हैं। परन्तु ज्योतिः बहु वा भिन्न भिन्न नहीं हैं। तैसे ही अग्नि रूपी चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप परब्रह्म निराकार साकार अखण्डाकार असीम सर्व्वशक्तिमान पूर्णरूप से विराजमान हैं, और नाना छिद्र विशिष्ट पात्ररूपी अविद्या उपाधि भेद से अज्ञान अवस्थापन्न मनुष्य लोगों की नेत्र में तारागण, विद्युत चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिः स्वरूप जीव ज्योतिः रूप से बाहर मुख पृथक् पृथक् असंख्य बोल कर बोध होते हैं। परन्तु चन्द्रमा सूर्य्यनारायण विराट ब्रह्मज्योतिः पृथक् पृथक् वा असंख्य नहीं हैं। स्वरूप अवस्थापन्न मनुष्य लोग अन्तर या बाहर में निराकार साकार अखण्डाकार असीम अनन्तरूपी चन्द्रमा सूर्य्य-नारायण परब्रह्म को अपने सहित अभेद रूपसे सर्व्वकाल में देखते हैं और वही लोग जानते हैं कि अविद्या द्वारा ही अज्ञान

अवस्थापन्न मनुष्यलोगों के नेत्र में ज्योतिः बाहर सुख पृथक् पृथक् बोध होता है।

ज्योतिः के अद्वैत भाव के विषय समझना होगा कि, चतुर्दिक मेघविशिष्ट आकाश में विद्युत एक तरफ, अथवा दश तरफ पृथक् पृथक् रूप से चमके तो, अज्ञान अवस्थापन्न मनुष्य-लोग उसी तरफ में ब्रह्मशक्ति विद्युत् को खण्डाकार यत् किंचित् एक वा दश मध्यें करते हैं। परन्तु ब्रह्मशक्ति विद्युत ज्योतिः जो निराकार भाव से चतुर्दिक पूर्णरूप से हैं वह उन् लोगों को बोधगम्य नहीं होता है। ज्ञानवान मनुष्य जानते हैं कि मेघ के अन्तर्गत एकही विद्युत् ज्योतिः चतुर्दिक पूर्णरूप से हैं प्रयोजनानुसार के जो तरफ जितने परिमान प्रकाश होते हैं, तितने ही साधारण को बोधगम्य होता है। परन्तु ब्रह्मशक्ति विद्युत ज्योतिः सीमाबद्ध वा पृथक् पृथक नहीं हैं। पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप के इच्छायों से प्रकाश होते हैं। यदि उन्के इच्छा होये कि समस्त आकाश मय ज्योतिः रूप से प्रकाश होंगे तो वह भी होगा। तैसे ही पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप अनादि अनन्त रूप अखण्डाकार निराकार भाव से विराजमान हैं। केवल जगत् के प्रयोजन के लिये आवश्यक मत चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिः त्रिगुणात्मा रूप से प्रकाश होकर भी त्रिगुणातीत भाव से सर्व्वकाल में विराजमान रहते हैं। अज्ञान अवस्थापन्न मनुष्य लोग इन्के पूर्ण भाव न समझके इनको व्यष्टि यत्किञ्चित् ज्योतिः मध्यें करते हैं। परन्तु जो ज्ञानी भक्तलोग को इन्हीं अपने गुणों से अनुग्रह करके अपना स्वरूप दिखाये हैं, उन्लोग इनको अनादि अनन्तसर्व्वशक्तिमान सर्व्वव्यापी पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप जगत्

की माता पिता गुरु परमात्मा वो एकमात्र सर्व्वमङ्गलकारी वोलं-कार चिन्ह सक्ते हैं।

ओं शान्तिः। ओं शान्तिः। ओं शान्तिः।

चन्द्रमा या सूर्य्यनारायण क्या चेतन हैं?

हिन्दु मुसलमान इसाइ स्त्री पुरुष ऋषि मुनि मनुष्य मात्रही अपनी मान अपमान, जय पराजय, समाजिक, मिथ्या स्वार्थ परित्याग करके गम्भीर वो शान्त चित्त से जड़ चेतन विषय के सारभाव ग्रहण करिये, जिस में जगत का अमंगल दूर होकर मंगल विधान होय।

यदि कोई कह दें कि आपकी कान कौआ लेगिआ तव कानपर हात न देकी कौये के पिछे दौरना ज्ञानी का अनुपयुक्त है। मनुष्य मात्रही को वस्तु विचार करके जड़ चेतन विषय में वोध करना उचित है। जिन के वस्तु वोध है उन्हींका ज्ञान है जिन्को ज्ञान है उन्हींका शान्ति है। जिन्को वस्तुवोध नहीं है उन्का ज्ञान नहीं है जिन्को ज्ञाननही है उन्का शान्ति नहीं है।

वस्तुविचार क्या है? आप और आप के मंगलकारी इष्ट देवता ईश्वर गड अल्लाह इत्यादि अर्थात पूर्ण परव्रह्म ज्योतिः स्वरूप जड़ या चेतन क्या वस्तु, वह कहां हैं उन्का अस्तित्व कहां हैं, आपका या उन्का रूप क्या है—इस्के निर्णय के लिये जो वुद्धि का चेष्टा है उसी का नाम वस्तु विचार। यही जो अनादि ओंकार मंगलकारी विराट परव्रह्म प्रकाशमान

चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिः स्वरूप जगतके मातापिता गुरु आत्मा हैं इनको कौन गुण के अभाव से जड़ कहते हैं और कौन गुण के प्रकाश रहने से आपलोगों को और जिनको आपलोग चेतन कहके नाम कल्पना करते हैं जो ईश्वर गड अल्लाह परमेश्वर देव देवी इत्यादि हैं उनको चेतनमय कहते ? वह या उनका प्रकाश कहां हैं, उनका अस्तित्व ही वा कहां है, उनका कोई भी एक गुण क्या कोई देखा दे सकेंगे ? जिनके गुण प्रकाश होंगा वही गुण उन्हीं का नाम मात्र होगा। जैसे अग्नि के नाना नाम गुण अग्निकारूपही है। अग्नि जो वस्तु हैं वही निर्व्वाण हो ने से उनका नाम रूप गुण प्रभृति भी उनके संग निर्व्वाण होता हैं।

यदि आपलोग कहिये, जो चलते बोलते खाते हिलते डोलते उनको हमलोग चेतन कहते हैं और जो न हिलते डोलते खाते पिते न चलते बोलते हैं हमलोग उनका नाम कल्पना किये हैं जड़। तब इहां विचार पूर्व्वक समुझके देखिय कि, जीव समस्त जाग्रत अवस्था में हिलते, डोलते, खाते पिते, बोलते चलते और सुषुप्ति अवस्था में अर्थात घोर निद्रामें नहीं बोलते चलते और चेतना या ज्ञान नहीं रहती है कि, मैं एसा सृष्टि देखा था या नहीं और कौन समय सोए थें और कौन समय उठुगा, जड़ या चेतन हैं या नहीं इत्यादि कोई ज्ञान नहीं रहती है। उपरान्त आग्रित अवस्था में बोध होता है कि मैं अराम से सोए थें। जाग्रत में जीव सभोंका चेतना या ज्ञान रहता है, सुषुप्ति अवस्था में ज्ञान नहीं रहता जीव जड़रूप रहते हैं। परन्तु दोनों अवस्था में एकही जीव रहता है। यही दोनो अवस्थायों

में कौन अवस्था को जड़ और कौन अवस्थाको चेतन कहेंगे अथवा दोनों अवस्था को जड़ या चेतन कहेंगे। और भी देखिये आपलोग तो हिलते बोलते, खाते पिते हैं और चेतन होकर सर्व्व कार्य्य करते हैं परन्तु आपलोगों का जो मंगलकारी इष्ट देवता ईश्वर गड अल्लाह खोदा वह कहां खाते हैं, चलते हैं, बोलते हैं जो वह प्रत्यक्ष करके आप उनको चेतन कहते या कहेंगे? कहां कौन भाव से उनको चेतना अथवा ज्ञान प्रकाश हैं वह आपलोग देखा दिजिये जिस्से हमलोग भी देख कर समुझे कि यही इनके इष्ट देवता हैं और इनका यही चेतन गुण या ज्ञान है जिस्के द्वारा समस्त ब्रह्माण्ड के कार्य्य होता है।

और भी विचार के देखिये कि, आपलोग जीव समस्त जब शरीर धारण नहीं किये थे तब आप जड़ या चेतन, द्वैत अद्वैत या शुन्य प्रभृति क्या थे कुछ ही नहीं जानते और अंरेजी फार्शी उर्द्दु संस्कृत आदि पडे थे या नहीं, पण्डित या मुर्ख, ज्ञानी या अज्ञानी धनी निर्धन क्या थे इस्से कोई भी ज्ञान क्या था? जब आपलोग शरीर धारण अथवा जन्म ग्रहण किये हैं तब भी आपलोग सभी मुर्ख होकर जन्मलिये हैं। संस्कृत इंरेजी फार्शी उर्द्दु, बाइबेल कोराण वेद वेदान्तादि पढ़के जन्म ग्रहन नहीं किये। एक एक अक्षर क, ख, ग, घ, आदि पढ़ के पण्डित मौलवि पाद्री आदि पद दिये अथवा ग्रहण हुई है। इसमें बड़ ही आश्चर्य्य के विषय यह हैं कि, प्रत्यक्ष मङ्गलकारी ओंकार विराट परब्रह्म ज्योति:स्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण स्वत: प्रकाश वो अनादि काल से प्रकाशमान हैं परन्तु आपलोग आज जन्म लेकर कल मर जाते हैं, सामान्य एक घास में जो क्या

गुण है और कौन कार्य्य या उपकार में लगता है वह भी आप-लोग का ज्ञान नहीं है। अथच जगत के ज्ञान दाता और पुञ्जीभुत ज्ञान, स्वरूप विराट परब्रह्म चन्द्रमा सूर्य्यनारायण जगत के मङ्गलकारी माता पिता गुरु आत्मा हैं उनको जड़ बोध से घृणा करके त्याग वो मिथ्या कल्पना को चेतन ज्ञान कर के स्वयं भ्रान्ति में पड़ते हैं और जगत को भ्रान्ति पंथ में चलाते हैं। वह अतीव दुःख की विषय है।

जिनको जैसा संस्कार पड़ा है वह जैसे समुझते हैं और समुझाते हैं। जिनको द्वैत संस्कार है वह द्वैत जिनको अद्वैत संस्कार है वह अद्वैत जिनको सभाव संस्कार है वह सभाव इत्यादि। मङ्गलकारी विराट चन्द्रमा सूर्य्यनारायण पुञ्जीभुत ज्ञान को जिनके जड़ संस्कार पड़ा है बोध से उसी भाव से प्रति-पादन करते हैं। फिर जिनके संस्कार चेतन है वह श्रद्धा भक्ति पूर्व्वक इनको पूर्णभाव से उपासना करते हैं। परन्तु सकल समाज में यदि मनुष्य के स्वंय प्रत्यक्ष ज्ञान या अनुभव रहता तो जड़ चेतन विषय में परस्पर मिथ्या विचार के वश इष्ट देवता से विमुख होके हिंसा द्वेश अशान्ति भोग और जगतके अमङ्गल के हेतु नहीं होते! ऐसे ज्ञान रहने से समुझते हैं कि सृष्टि के आदि में केवल एक मात्र परमात्मा ही हैं, दूसरा कोई भी वस्तु वा सृष्टि न होगी। अपने शास्त्रानुसार से "मैं बहुरूप होंगे" यही संकल्प करके वह स्वयं कारण से सूक्ष्म और सूक्ष्म से स्थूल स्त्री पुरुष चराचर को लेकर असीम अखण्डाकार निखिल पूर्ण रूपसे विराजमान रहे हैं, जड़ शक्ति के वश जड़ के कार्य्य सूक्ष्म चेतन शक्ति या ज्ञान के द्वारा समस्त चेतन का

कार्य्य ब्रह्माण्ड के अन्तर वाहर से प्रेरणा करते है और करीते हैं जड़ अवस्था में चेतन को कार्य्य नही होता है परन्तु चेतन के सामर्थ है जो जड़ पदार्थ को कार्य्य करा सक्ते हैं । वह स्थूल जड़ लय करके सूक्ष्म ज्ञान अवस्था जन्म कर सक्ते हैं और सूक्ष्म ज्ञान अवस्था से ज्ञानातीत कारण में स्थित होने का सामर्थ या सक्ति भी चेतन का है !

ओं शान्ति: ओं शान्ति: ओं शान्ति: ॥

चैदह रत्न वो चौदह विद्या ॥

शास्त्र पढ़के मनुष्य लोगों का यह संस्कार हुई है कि, देवासुर मिलकर वासुकीनाग द्वारा समुद्र मन्थन करके चौदह रत्न वो चोदह विद्या उद्धार किये हैं । वही वासुकी नाग के मुहके तरफ असुरगण और पोछ के तरफ देवगण पकड़े थें समुद्र मन्थन के वाद अमृतादि निकली और उपरान्त विष निकलकार जगतको व्यथित की, तव देवादि देव महादेव अर्थात विराट ब्रह्म जगत के हितार्थ के लिये उसी विष को पानकिये । तवही से उन्का कण्ठ नोलवर्ण हुई ।

लौकिक चोदह रत्न वो चौदह विद्या किस्को कहते हैं, वह सवही जानते हैं । परन्तु इस्के अध्यात्मिक अर्थ क्या है?' मङ्गलकारी विराट ब्रह्म निराकार साकार, कारण सूक्ष्म स्थूल, चराचर स्त्री पुरुष को लेके असीम अखण्डाकार स्वत: प्रकाश पूर्णरूप से विराजमान हैं । इन्के सिवाये द्वितीय कोई रत्न, विद्या या वस्तु नहीं हैं, होंगे नहीं, होने का सम्भावना भी

नहीं हैं। यह ध्रुव सत्य जानेंगे। यही मङ्गलकारी विराट ब्रह्म जगत्के गुरु माता पिता आत्मा के शक्ति या उनके अङ्ग प्रत्यङ्गादि रूप सृष्टि, पालन वो संहार प्रभृति को चौदह रत्न वो चौदह विद्या कहते हैं। पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा वो सूर्य्यनारायण यही विराट ब्रह्म के मङ्गलकारी सात अङ्गप्रत्यङ्ग से जीव समस्त के स्थूल सूक्ष्म शरीर के उत्पति पालन वो संहार होता है! पृथिवी से अन्नादि उत्पन्न होकर जीवमात्र का पालन वो स्थूल शरीर के हाड मांस आदि का वृद्धि होता है। जल से प्यास निवृत्ति वो जल वर्षण से अन्नादि उत्पन्न होता है इत्यादि। यही मङ्गलकारी विराटब्रह्मके सात अङ्गप्रत्यङ्ग से जीव के कर्म्मेन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय चौदह रत्न वो चौदह विद्या प्रभृति अन्तर वाहर में प्रत्यक्ष विराजमान हैं। मङ्गलकारी विराट ब्रह्म यही चौदह विद्या वो चौदह रत्न द्वारा जीव मात्र के सर्व्व काल ही में सर्व्व प्रकार से मङ्गल करते हैं। जिनलोग समदृष्टि सम्पन्न, ज्ञानवान, परमात्मा के प्रिय हैं उनलोग यह ज्ञान नेत्र से सर्व्व प्रकार देखते हैं। परमात्मा विमुख अज्ञानाच्छन्न मनुष्यगण यह समुझने या देखने नहीं पाकर अज्ञान से अभिमान के वश नाना प्रकार उपाहस करके यहलोक वो परलोक में सर्व्वकाल सर्व्व प्रकार से कष्ट भोग करते हैं।

यही जगत-माया या मन समुद्र मन्थन करके चौदह रत्न वो चौदह विद्या वाहर हुई है। असुररूपी इन्द्रियोंके जो नीच गुण या मुह वह असत् ओर टानते हैं वो देवतारूपी इन्द्रियों जो सत् गुण या पोछ वह सत ओर को सदा सर्व्वदा टानते हैं।

"चौदह रत्न"—लक्ष्मी कौस्तुभ पारिजातक सुरा धन्वन्तरि चन्द्रमा, धेनु: कामदुहा सुरेश्वरगजो रम्भादि देवाङ्गना, अश्वः सप्तमुखः सुधा हरि धनुः शङ्खो विषं चाम्बुजे।

लक्ष्मी—अर्थात मङ्गलकारिणी ज्योतिः हैं, जिन्के द्वारा जीव मात्र ही का सर्व्वप्रकार से मङ्गल होता है। कौस्तुभ—मणि, हीरा प्रभृति अर्थात सब मणि के मणि ज्योतिर्मणि सूर्य्यनारायण हैं। पारिजातक—स्वर्ग के फुल अर्थात यही जगत ब्रह्माण्ड, चन्द्रमा तारागण रूप ज्योतिः फुल हैं। सुरा—मदिरा अर्थात् ब्रह्म ज्ञान जिन्के द्वारा ब्रह्म प्राप्ति होता है या ब्रह्मयोग में सर्व्वदा ही जो निशा लगा रहता है। धन्वन्तरी—वैद्य अर्थात् भगवान वैद्य हैं। अज्ञान प्रभृति रोग से ज्ञान् औषध देके वह जीव को सर्व्व प्रकार से मुक्त करते हैं। धेनुः कामदुहा—अर्थात् पूर्ण विराट मङ्गलकारी काम धेनु द्वारा सर्व्व प्रकार से जीव पालित वो ज्ञान दुग्ध द्वारा अभेद से मुक्त होते हैं। जिन लोग परमात्मा के प्रिय ज्ञानवान ऋषि मुनि उन लोगों के निकट वह मङ्गलकारिणी धेनुः कामदुहा रूपसे प्रकाश रहते है। सुरेश्वर गजः—ऐरावत हाती अर्थात् सकल इन्द्रियों के हर्त्ता कर्त्ता मनोरूपी मङ्गलकारीचन्द्रमा ज्योतिः हैं। रम्भादि—अप्सरा या स्त्रीगण अर्थात् इन्द्रियों को चेतन करके जो ज्योतिः जगत को मोहित करते हैं, वही ज्योतिः को देवी अप्सरादि कहके जानेंगी, जगत उन्हीं के वशीभूत हैं। अश्वः सप्तमुखः—सात मुहके घोड़ा अर्थात् जीव समस्त के दो नेत्र, दो काण, दो नाक के छिद्र और मुख यही सात छिद्र युक्त मस्तक है वहीं सात मुख के घोड़े के उपर आरूढ़ होके मङ्गलकारी

विराट ब्रह्म चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिः अन्तर से प्रेरण करके जीव समस्त को चलाते हैं। मन रूपी घोड़ा मुहूर्त्त में आकाश पाताल घुरके आते हैं, विद्युत भी इनको धरने नहीं सक्ते। सुधा —अमृत अर्थात् भगवान जो ज्ञानरूप सुधा द्वारा अज्ञानरूपी मृत्यु से जीव को रक्षा करते हैं। उसी ज्ञान या भगवानरूपी अमृत पिने से जीव अमरत्व प्राप्ति होते हैं और मरने का भय नहीं रहता है। हरिधनुः—वुद्धि या ज्ञान अर्थात् स्वरूप ओंकार हैं। यही ओंकार रूपी सूर्य्यनारायण जीवात्मा वो परमात्मा को अभेद से परमानन्द में रखते हैं वही वुद्धि या ज्ञानस्वरूप हैं। शङ्ख—मस्तक अर्थात् जल से जीव मात्र ही के शरीर मुस्तक, हाड़ या शङ्ख जन्मता है। मङ्गलकारी विराट ज्योतिः स्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण यही शङ्ख अन्तर में मस्तक से वजाते हैं उसमें जीव समस्त नाना प्रकार शब्द करते हैं। जब वह चेतन ज्योतिः शक्ति मस्तक से सङ्कोच करते हैं अर्थात् निराकार भाव होते हैं तव जीव के सुषुप्ति अवस्था होती है और मस्तक शङ्ख से कोई शब्द नहीं होता है। फिर वह वजाने से मस्तक शङ्ख से शब्द निकलना सुरू होता है। विष—अर्थात् परमात्मा से यही जगत जो पृथक भासमान होता है उसी को विष जानेंगे। यही अज्ञान विष से जीव जरीभुत होकर मृत्यु तुल्य रहते हैं। देवादिदेव महादेव यही जगद्व्यापी विष को अपने आत्मा जानके पिये और ग्रहण कर के उनका कण्ठ नीलवर्ण हैं। महादेव विराट ज्योतिः स्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण मङ्गलकारी के कण्ठ में नीलवर्ण आकाश समभाव से विस्तारमान हुआ। अज्ञान अवस्थापन्न मनुष्य इनको पूर्णरूप से धारण करने या

समुझने नहीं सक्ते हैं। अम्बुज—पद्मफुल, अर्थात् मङ्गलकारी विराट ब्रह्म जिन्के ज्ञान कमल नेत्र, चन्द्रमा सूर्य्यनारायण चराचर को लेकर पूर्णरूप से आकाश विराजमान हैं वो सर्व्व प्रकार मङ्गल करते हैं।

"चौदह विद्या" यथा:—ब्रह्मज्ञान, रसायन, कविता, ज्योतिष, व्याकरण, धनुर्धारण, जलतरङ्ग, सङ्गीत, वैद्यक, वाजीवाहन, कोकशास्त्र, नटनृत्य, सम्बोधना वो चातुरी। 'ब्रह्मज्ञान"—जिन्के द्वारा ब्रह्म प्राप्ति होता है उसी को ब्रह्मज्ञान कहते हैं। चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिः स्वरूप ही को ब्रह्मविद्या या ज्ञान कहके ध्रुव जानेंगे। "रसायन"—परमात्मा के उद्देश्य उत्तम रूपसे समुझ के व्यवहारिक वो पारमार्थिक कार्य्य में जिस्के द्वारा जो कार्य्य सम्पन्न होता है उस्के द्वारा वही कार्य्य प्रीति पूर्व्वक सम्पन्न करने को 'रसायन' जानेंगे। जिस अन्दाज से निमक देने से व्यञ्जनादि सुस्वाद होता है तैसे ही विवेक, भक्ति, धैर्य्य, सन्तोष प्रभृति द्वारा रसायन करके धीरे धीरे मङ्गलकारी विराट चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिः स्वरूप के संसर्ग में अभेद ज्ञान होने का नाम प्रकृत रसायन जानेंगे। "कविता"—पद्य प्रभृति को मनुष्य कविता कहते हैं। परन्तु प्रकृत वस्तुज्ञान अर्थात् जो वस्तु का जो पद है वही नियमानुसार से रचना या प्रकाश करने को "कविता" कहते हैं। जो वस्तु ज्ञान शुन्य है, वृथा नाना शब्द रचना करके मनुष्य को मोहित करते हैं, उस्को प्रकृत कविता नहीं कहते हैं। "वेद"—ज्ञान स्वरूप अर्थात् जिस्के द्वारा मनुष्य ज्ञान वो मुक्तिलाभ करते हैं। ज्योतिः स्वरूप का नाम ही वेदमाता है। "ज्योतिष"—जिन्के पञ्चमें

जीवात्मा परमात्मा के अभेद प्रकाश होता है वही ज्योतिष या ज्योतिषवेत्ता हैं, वही भुत भविष्यत् वर्त्तमान पूर्णरूप से परमात्मा के सहित अभेद सर्व्वकाल में जानते हैं जब जो हालत होने का होगा वहभी परमात्मा के द्वारा जान सक्ते हैं। "व्याकरण"—व्याकरणोक्त वर्णादि क्या वस्तु है वो जिस्से वर्ण प्रभृति होता है वह क्या है? सिद्दाइ से स्वरवर्ण वो व्यञ्जनवर्ण पुंलिङ्ग स्त्रीलिङ्ग वो क्लीवलिङ्ग प्रभृति हुआ है। संस्कारानुसार अज्ञानावस्थापन्न मनुष्य सिद्दाइ के अङ्कित वर्णादि को पृथक पृथक वोध करते हैं। परन्तु जिन्के ज्ञान या व्याकरण के अध्यात्मिक भाव वोध है वह समस्त वर्ण ही को सिद्दाइ मात्र जानते हैं। कारण समस्त वर्ण सिद्दाइ से हुई है, सिद्दाइ के रूपही हैं। केवल लौकिक कार्य्य निर्व्वाह के लिये भिन्न भिन्न नाम कल्पना मात्र है। सिद्दाइ रूपी पूर्ण परब्रह्म ज्योति:स्वरूप कारण सूक्ष्म स्थूल चराचर स्त्री पुरुष को लेकर असीम अखण्डाकार स्वत:प्रकाश विराजमान हैं। समस्त चराचर स्त्री पुरुष के स्थूल, सूक्ष्म वर्ण उन्से तद्रुपधारी हुई है उन्हीं के रूप मात्र है। स्थूल शरीर को व्यञ्जनवर्ण वो सूक्ष्म शरीर को स्वरवर्ण जानेंगे। स्वरवर्ण के साहाय्य विना व्यञ्जनवर्ण के उच्चारण नहीं होता। आपलोग के सूक्ष्म शरीर स्वरवर्ण जब शोते रहते हैं तब स्थूल शरीर व्यञ्जनवर्ण पड़े रहते हैं उस्के द्वारा और कोई व्यवहारिक या पारमार्थिक कार्य्य निष्पन्न नहीं होता है। फिर जब आपलोग के स्वरवर्ण सूक्ष्म शरीर जगाके उठाते हैं तब व्यञ्जनवर्ण स्थूल शरीर वो स्वरवर्ण सूक्ष्म शरीर के योग होके व्यवहारिक वो पारमार्थिक उभय कार्य्य करने का शक्ति जन्मता है। विसर्ग (:) आपलोग

का नेत्र ज्ञान नेत्र हैं। ऐसेही वर्णादि के भाव समझ लेंगे "धनुर्द्धारण"—धनु अर्थ ओंकार। जीवात्मा श्रद्धा पूर्व्वक वही ओंकार रूपी धनु धारण करके अद्वैत या अभेद ज्ञान रूप शर या वाण द्वारा परमात्मा लक्ष्य को भेद या हनन करने से उन्हीं को प्रकृत धनुर्द्धारण कहते हैं। "जलतरङ्ग"—जल से जमके यन्त्र अर्थात् समस्त चराचर स्त्री पुरुष के स्थूल शरीर हुई है। उनके अन्तर में परमात्मा नाना तरङ्गरूपी भाव प्रकाश करते हैं। यथा:—अज्ञान, ज्ञान, विज्ञान, तान, सुर, लय इत्यादि। "सङ्गीत"—स्थूल, सूक्ष्म कारण जगत को परमात्मा में विवेक द्वारा लय करना अर्थात परमात्मा से अभिन्न या परमात्मा रूपही देखने का नामताल है। पूर्णपरमात्मा से जगत् को पृथक् वोध करने का फांकताल वो वेताल जानेंगे। प्रेम और भक्ति राग रागनी या प्रकृति पुरुष सहित मङ्गलकारी परमात्मा में अभेद लय होने को प्रकृत सङ्गीत जानेंगे। "वाजिवाहन"—अश्वरूपी चराचर स्त्री पुरुष के स्थूल सूक्ष्म शरीर है। इन्द्रिय घोड़ा में आरोही परमात्मा इन्द्रियादि को प्रेरण करके समस्त व्यवहारिक वो पारमार्थिक कार्य्य सम्पन्न कराते हैं। जो जीव इन्द्रियादि संयुक्त मनरूप घोड़ा को दमन करके अर्थात् प्रीति पूर्व्वक परमात्मारूप जानके सर्व्वदा आरोही रहते हैं, उसी को प्रकृत अश्वारोही जानेंगे। "कोक शास्त्र"—स्त्री पुरुष के क्रीड़ावर्णन जो शास्त्र में है उसी को मनुष्योंने कोक शास्त्र कहते है। परमात्मा के भक्त समदृष्टि सम्पन्न ज्ञानिगण जीवात्मा परमात्मा के अभेद ज्ञान या मिलन सदा अनुभव करते हैं। परमात्मा ही को प्रकृत मूल कोक शास्त्र जानेंगे। "नटनृत्य"—

यही जो ब्रह्मांड चराचर स्त्री पुरुष नाना नामरूप विस्तार करके परमात्मा स्वयं नाचते हैं वो जीव समस्त को ननचाते हैं अर्थात् लीला करते हैं—इन्हीं को प्रकृत नटनृत्य जानेंगे। "सम्बोधना"—जिनके समदृष्टि ज्ञान है जो सबही को अपना आत्मा परमात्मा के स्वरूप जानते हैं, उन्हीं को सम्बोधन जानेंगे। "चातुरी"—परमात्मा सिवाये कोई चतुर नहीं हैं, होंगे नहीं, होने का सम्भावन भी नहीं है! वही यह चतुरता बुद्धि या ज्ञान द्वारा उत्पत्ति, पालन वो लय करते हैं। वही चतुरता बुद्धि के द्वारा जीव मात्र के अन्तर में चतुरता बुद्धि प्रेरण करके वह सर्व्व प्रकार के कार्य्य सम्पन्न करते हैं।

समस्त विद्या, रत्न, जीव जन्तु इत्यादि के कारण विराट चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ही को जानेंगे वो यही जगत ज्योतिःही के रूप मात्र हैं। मङ्गलकारी परमात्मा विराट जोतिः स्वरूप के शरणागत होने से सहजमें समस्त समुझा जाता है और सर्व्व विषय में मङ्गल होता है—यह ध्रुव सत्य जानिये।

वेदान्त के मत से सृष्टि प्रकरण।

एक से अधिक सत्य न रहे तो जगत के समस्त उत्तमाधम गुण विराट ब्रह्म के अन्तर्गत है, जैसे आप के उत्तमाधम समस्त गुण आप के अन्तर्गत है। अज्ञान के वश उत्तम गुण प्रकाश न होके अधम गुण ही के प्रकाश होता है वोलं कर विराट ब्रह्म में अज्ञानी अधम गुण ही देखते हैं।

इसलिये कल्पित हुई है कि, परब्रह्म के आश्रित माया से शब्द सहित आकाश के उत्पत्ति होता है आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी का उत्पत्ति होता है। जैसे दुध जमकर दधि होती है यही पञ्चतत्वों के एक एक तत्व में (सूक्ष्मरूप) पांच पांच तत्व रहता है! यही पांच तत्वों के रूप वो गुण यथा:—आकाश तत्वों के पांच रूप वो गुण:— काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय। वायु तत्वों के पांच रूप वो गुण:—चलना, वोलना, धावना, प्रसारण, अकुञ्चन। अग्नि तत्वों के पांचरूप वो गुण:—क्षुधा, पिपासा, आलस्य, निद्रा, क्लान्ति। जल तत्वों के पांच रूप वो गुण:—शुक्र, रक्त, लार, मूत्र, पसिना। पृथ्वी तत्वों के पांच रूप वो गुण:—हड्डी, मांस, त्वचा, नाड़ी, लोम। पृथिव्यादि पञ्चतत्वों से पचिश रूप गुण तत्व हुई है। यही पचिश तत्वों के समष्टि से स्त्री पुरुष जीव मात्र के स्थूल शरीर तद्धारी होता है। यही शरीर के मध्य में सूक्ष्म शरीर सप्तदश (सतरे १७) तत्व का समष्टि है। यथा :—

पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्म्मेन्द्रिय, पांच प्राण, मन वो बुद्धि। यही सत्रह तत्व से सूक्ष्म शरीर हुई है। पांच ज्ञानेन्द्रिय यथा:—श्रवण, स्पर्श, दर्शन, आस्वादन, घ्राण। पांच कर्म्मेन्द्रिय यथा:—वाक्, हाथ, पाद, लिङ्ग, गुदा। पांच प्राण यथा:— प्राण, अपान, समान उदान, व्यान।

यही शरीर के मध्य में अधिष्ठात्री देवतायों का नाम यथा:—श्रवण के देवता दिक्पाल, दशों दिशा व्यापकर स्थित है, आकाश रूप ब्रह्म हैं, शब्द उनकी विषय है। त्वचा के

देवता वायु, स्पर्श उनकी विषय है। नेत्र के देवता सूर्य्य-नारायण तेज: रस उनकी विषय है। घ्राण के देवता अश्विनी कुमार अर्थात जीवात्मा अहङ्कार तेजरूप, गन्ध उनकी बिषय है। वाक्य के देवता अग्नि, वचन उनके विषय है। हस्त के देवता इन्द्र अर्थात सूर्य्यनारायण, उनके विषय जल ग्रहण वो प्रदान करना। पद के देवता वामन अर्थात् वायु, गमनागमन उनकी विषय है। उपस्थ अर्थात लिङ्ग के देवता प्रजापति ब्रह्मा अर्थात तेज: ज्योति: रति भोग उनकी विषय है। गुदा के देवता यमराज अर्थात जठराग्नि ज्योति:, मलत्याग उनकी विषय है। मन के देवता ज्योति:स्वरूप चन्द्रमा, संकल्प उनकी विषय है। बुद्धि के देवता ब्रह्मा अर्थात् सूर्य्य-नारायण, सत्य को निश्चये कराना उनकी विषय है। चित्त के देवता वासुदेव अर्थात् विराट विष्णु भगवान चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योति:स्वरूप, सत्य में निष्ठा इनकी बिषय है। अहङ्कार के देवता रुद्र अर्थात् सूर्य्यनारायण, अहं अस्मिरूप अभिमान उनकी विषय है।

उपरोक्त लिखी हुई जो सकल स्थूल वो सूक्ष्म शरीर इन्द्रियादि के अधिष्ठात्रीदेवतायों के पृथक् पृथक् नाम कल्पित हुई है। वह सब भिन्न भिन्न जुदा देव देवो को नाम नहीं है। वे नाम सब एकही पूर्णपरब्रह्म ज्योति:स्वरूप विराट भगवान सूर्य्य-नारायण हो के भिन्न भिन्न अङ्ग प्रत्यङ्गों के भिन्न भिन्न शक्ति गुण क्रिया के लिये भिन्न भिन्न कल्पित नाम मात्र है।

आपलोगों के यह स्थूल देह अन्नमय कोष है। कोष के अर्थ आधार (मियान) यथा:—"असि कोष" अर्थात् तलवार के

मियान। और आप जिन को "हम" कहते हैं वह ज्योतिः है— वही ज्योतिः अभी जिनके द्वारा आच्छादित करके वोध होता है वह उसी ज्योतिः के कोष या आधार या मियान है। अर्थात् तलवार जैसे कोष या मियान में रहता है। तैसे ही जो पदार्थ को "हम" कहते अर्थात् ज्योतिः वह इस स्थूल शरीर रूप कोष या मियान में रहते हैं।

स्थूल शरीर के भितर में जो ज्योतिः रहती है उसी ज्योतिः को "हम"कहते हैं उन के और एक नाम है सूक्ष्म शरीर। यह सूक्ष्म शरीर के भितर में और तिन कोष है, यथाः—प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञानमय कोष। पञ्च प्राण वो पञ्चकर्मेन्द्रिय यही दश समष्टि के नाम प्राणमय कोष। पञ्च कर्मेन्द्रिय वो मन यह छय समष्टि के नाम मनोमय कोष। पञ्च ज्ञानेन्द्रिय वो बुद्धि यह छय समष्टि के नाम विज्ञानमय कोष। प्राणमय कोष के कार्य्य यह स्थूल शरीर को सचेतन रखना। जब तक यह शरीर में प्राणमय कोष रहते हैं। तब तक यह देह अर्थात् स्थूलशरीर सचेतन अर्थात् जीवित रहता है।

मनोमय कोष के कार्य्य आध्यात्मिक वो व्यवहारिक समस्त क्रिया करना। जबतक मनोमय कोष यह स्थूल शरीर में वर्त्तमान रहते हैं, तबतक आप आध्यात्मिक वो व्यवहारिक समस्त क्रिया करने का सामर्थ होता है। मनोमय कोष नष्ट होने से यह देह सचेतन रहती है, परन्तु उस देह से किसी प्रकार का कार्य्य वा क्रिया कर नहीं सक्ती जैसे मनुष्य जब सुषुप्ति अवस्था में रहते हैं, सचेतन शरीर तब भी जीवितावस्था में पड़ी रहती—क्योंकि प्राणमय कोष तब भी कार्य्य (श्वास

प्रश्वास) को करती है, परन्तु तव मनोमय कोष निश्चेष्ट रहने से वह देह कोई प्रकार वोधावोध कर नहीं सक्ती।

विज्ञानमय कोष के कार्य्य—विचार वो सत्य में निष्ठा। सूक्ष्म शरीर के मध्य में कारण शरीर है। उसी कारण शरीर के आठ कारण अवस्था है यथा:—

१। अज्ञान तमोगुणावस्था। २। सुषुप्ति गाढ़ निद्रावस्था। ३। हृदय स्थान स्वप्नावस्था। ४। देखना, वात वोलने का अवस्था अर्थात् जाग्रदावस्था। ५। आनन्द भोग, पूर्व्व के चार अवस्था का वोध में आनन्दितावस्था ६। दिव्य शक्ति वस्तु के विषय में बोधावस्था अर्थात् ज्ञानस्वरूप किञ्चित् संशयावस्था। ७। मकार मात्र में हूं वोधावस्था अर्थात् विज्ञानावस्था। ८। प्रज्ञा में कौन वस्तु हूं उस को बोधावस्था अर्थात् मैं और ईश्वर भिन्न भिन्न नहीं हूं यह बोधावस्था। कारण शरीर के आठ अवस्था रहने में और शेष अवस्था में अर्थात् अष्टमावस्था में जीव ईश्वर के संग अभिन्नवोध के कारण परमानन्द होते हैं; इस लिये कारण शरीर को आनन्दमय कोष कहते हैं।

परब्रह्म के आश्रित माया से शब्द सहित आकाश की उत्पत्ति हुई है, यह शास्त्र में लिखा है। इस लिये शास्त्रज्ञ अथच अज्ञान अवस्थापन्न मनुष्य मनमें करते हैं कि परब्रह्म के आश्रित जो माया है वह परब्रह्म से पृथक है। परन्तु यथार्थ में वह नहीं है। परब्रह्म के जो शक्ति से सृष्टि पालन वो लय होता है, उसी शक्ति ही को माया या प्रकृति कहते हैं, परन्तु परब्रह्म और उन्के शक्तिरूप माया उन से पृथक् नहीं है, परब्रह्म ही के स्वरूप हैं अर्थात् माया शक्ति परब्रह्म ही स्वयं हैं।

जैसे आप के आश्रित आपके शक्ति तेजः, बल, बुद्धि, ज्ञान इत्यादि आप से पृथक नहीं है, आप ही के स्वरूप अर्थात् आप जब वर्त्तमान रहते हैं तब आपका सर्व्वशक्ति आप के सङ्ग ही में वर्त्तमान है। जब आप सुषुप्ति अवस्था में जायेंगे तब आप के शक्ति समस्त आप के सङ्ग में लय पायेंगे। फिर जब आप जाग्रत होंगे तब आप का शक्ति आप के सङ्ग में प्रकाश होकर पृथक् पृथक् कार्य्य को करेंगे। जैसे आप के शक्ति का आपसे पृथक अस्तित्वा नहीं है, आप ही कार्य्य करने के लिए शक्तिरूप से प्रकाश होते हैं, तैसे ही शुद्ध चैतन्य पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप व्यवहार के लिये निराकार से साकार होकर बहु शक्ति रूप से विस्तारमान हैं। फिर वही शक्ति के सङ्कोच से जगत को लय करके स्वयं कारणस्वरूप में स्थित होते हैं और अभि भी है। इनमें निष्ठावान होकर व्यवहार वो परमार्थ साधना ही सार है। अतिरिक्त पाण्डित्य मात्र है।

ओं शान्तिः। ओं शान्तिः। ओं शान्तिः।

पुनर्जन्म वो कर्म्मफल।

मनुष्यलोग अज्ञान के वश कर्म्मफल जन्म मृत्यु प्रभृति विषय में स्वार्थ युक्त होके जो अशान्ति पाते हैं, उसका अन्त नहीं है। कोई कहते हैं कि, कर्म्म के द्वारा जन्म मृत्यु फलाफल भोग होता है। कोई कहते हैं जैसे परमात्मा अनादि हैं, तैसे ही सृष्टि वो कर्म्म अनादि हैं। कोई कहते हैं, सृष्टि के पूर्व्व में कर्म्म कहां था? सृष्टि अनादि नहीं हो सक्ती। अतएव कर्म्म के द्वारा जन्म मृत्यु फलाफल भी नहीं हो सक्ती है।

कर्म्मफल जन्म मृत्यु प्रभृति लेकर कष्ट भोग करना ज्ञानवान मनुष्यलोगों का उचित नहीं है। ज्ञान अर्थात स्वरूप बोध न होने से यह दोनों विषय समुझा नहीं जाता है, स्वरूप बोध होनेसे अर्थात परमात्मा समुझाने से सहज में समुझा जाता है। तब किसी के सङ्ग किसी के विरोध वा वैर हिंसा नहीं रहता है।

ज्ञानवान मनुष्य को समुझना उचित है कि, कर्म्मफल पुनर्जन्म रहे और न रहे श्रेष्ठ कार्य्य करना ही धर्म्म वो कर्त्तव्य है, उस से व्यवहारिक वो पारमार्थिक दोनों विषय ही में मङ्गल होता है। यद्यपि कर्म्मफल वो पुनर्जन्म रहै तो श्रेष्ठ कार्य्य में शुभ फल ही होगा। मनुष्य मात्रही को उचित है उत्तम श्रेष्ठ कार्य्य करना फलाफल के विषय अन्तर्य्यामी के इच्छा के उपर निर्भर करना कर्त्तव्य है, उस्से जगत का मंगल होता है।

जिन लोग कर्म्मफलाफल पुनर्जन्म मानने नहीं चाहते हैं उन-लोग के उद्देश्य यह है कि कर्म्मफलाफल पुनर्जन्म न रहै तो स्वार्थ-सिद्धि के लिये यथेच्छाचार से दूसरे को कष्ट देकर लोगों में निर्भय से रह सके। मनुष्य केवल ऐहिक सुख को परम सुख जानकर अपने सुख के उपर लक्ष रखते दूसरे के सुख में सुखी वो दुःख मे दुःखी होने नहीं चाहते, जिनलोग कहते हैं कि, पुनर्जन्म नहीं है, उनलोगों के मन में रखना उचित है जब एकही अनादि परमात्मा से उत्पन्न होकर अभी प्रत्यक्ष जन्म बोध होता है तब उपरान्त जो और जन्म बोध होगा नहीं उस्के कारण क्या है?

शास्त्र में लिखा है कि, वासनायुक्त को मनुष्य के पुनर्जन्म

होता है, और वासना रहित मनुष्य का पुनर्जन्म नहीं होता। इसी दृष्टान्त के द्वारा इस के भाव ग्रहण करेंगे। जैसे जिन्को खेमटा अर्थात् पतुरिया के नाच आदि देखने मे वासना वो आशक्ति है, उनको जिस जगहपर खेमटा नाच होता है; वहां पर अवश्य हो जाने होगा। और उस में जिन्को वासना वो आशक्ति नहीं है, उन्को वहां जाने का प्रयोजन नहीं है, और जायेंगे नहीं। तैसे ही जिनलोग को कर्म्मफल कैलाश वैकुण्ठ प्रभृति इन्द्रिय भोग के वासना है, उनलोगों का पुनर्जन्म वोध होगा। और जिनलोग के इन सकल भोग को इच्छा नहीं है केवल शुद्ध चैतन्य पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप परमात्मा में प्रेम भक्ति है, और समस्त ही परमात्मा में अर्पण करते हैं फल के वासना नहीं रखते हैं उनलोग के पुनर्जन्म नहीं होता है।

शास्त्र में कर्म्मकाण्ड वो ज्ञानकाण्ड के विषय वर्णित है। जिनलोग निष्काम निस्पृह, कर्म्मफलाफल, पुनर्जन्म भोग के इच्छा नहीं रखते हैं, सत्यप्रिय सारवस्तु परमात्मा के अन्वेषणकारी उनलोग ज्ञानकाण्ड को ग्रहण करते वो मुक्त स्वरूप रहते हैं, अर्थात जिनलोग सकल प्रकार श्रेष्ठकर्म्म यज्ञाहुति करके भी उस्के फलाफल परमात्मा में अर्पण करते हैं, उनलोग समस्त कर्म्म करके भी निर्लिप्त वो मुक्तस्वरूप रहते हैं।

कर्म्मकाण्ड दो प्रकार वर्णन है, एकप्रकार जिनलोग सत्य वस्तु जानने के इच्छा करते हैं, अथच ईश्वर के अज्ञानुसार गृहस्थ धर्म्म को सर्व्व प्रकार श्रेष्ठ कर्म्म और यज्ञाहुति करते हैं और समस्त कर्म्मफलाफल भगवान के नाम में अर्पण करते हैं,

उनलोग वही निष्काम कर्म्म अनुष्ठान के लिये पवित्र चित होकर ज्ञानस्वरूप परमात्मा में अभेद से आनन्दरूप रहते हैं, उनलोगों का पुनर्जन्म नहीं है। द्वितीय प्रकार, जिनलोग नानाप्रकार कर्म्म करके उसके फलाफल कैलाश वैकुण्ठ स्वर्ग इत्यादि भोग करने का इच्छा करते हैं, उनलोगों का पुनर्जन्म फलाफल को संशय रहता है।

सकल प्रकार कर्म्म करके भगवान में अर्थात पूर्णपरब्रह्म में अर्पण करने से वह कर्म्म द्वारा बन्धन नहीं होते, मनुष्य मात्र ही को यह करना उचित है। परन्तु प्रथम अवस्था में कोई भी निष्काम कर्म्म कर नहीं सके, प्रथम सकाम कर्म्म करते करते शेष में मन पवित्र होकर ज्ञान होने से सहज ही में निष्काम भाव से कर्त्तव्य कर्म्म सम्पन्न हो जाता है।

उत्तम कर्म्म निष्काम भाव से ही करे अथवा सकाम भाव से ही करें न क्यों उत्तम कर्म्म ही में उत्तम फल है यही सभी का करना उचित है। जो कर्म्म करने से व्यवहारिक वो पारमार्थिक दोनों विषय उत्तम रूप से सहज में निष्पन्न होता है सोई कर्म्म विचारपूर्व्वक करना उचित है और जो कार्य्य करने से इनदोनों विषयों के कोई प्रकार भी प्रयोजन में नहीं आती वह करना उचित नहीं। केवल अनर्थक दिन रात्र समय नष्ट वो आत्मा को कष्ट देकर कर्म्म करना निष्फल है, उनमें कर्म्म करना ही सार होता है। जैसे क्षुधा में अन्नाहार करने से सहज हो में क्षुधानिवारण होता है, वह न करके यदि पत्थर चिवाइये तो क्षुधानिवारण नहीं होता केवल कष्ट ही सार होता है। यदि अग्नि द्वारा अन्धकार दूर न करके जल वो

वरफ के द्वारा अन्धकार दूर करने का चेष्टा करिये, तो वह कभी होने का नहीं, उससें केवल कष्ट करना ही सार होता है। ऐसेहो सकल कर्म्म के भाव समुझ के आवश्यक कर्म्म करेंगे, जिस में आपलोग सकल विषय में परिवार सहित परमानन्द में आनन्दरूप रह सके और अपर को भी कोई कष्ट देना नहीं होता है।

जिनको ज्ञान होता है उनही का फलाफल जन्म मृत्यु प्रभृति भ्रान्ति नहीं रहता वह ज्ञान मुक्तस्वरूप से रहते हैं, वह ज्ञान नेत्र से देखते हैं कि, दश मनुष्य शयन करके निद्रित अवस्था में दश प्रकार स्वप्न देखते हैं, कि कोई राजा, कोई दरिद्र, कोई पण्डित, कोई मूर्ख, कोई सन्यासि कोई हसते हैं, कोई रोते हैं, इत्यादि वे दश मनुष्य स्वप्नावस्था में नानाप्रकार कर्म्म करते हैं परन्तु परस्पर कोई किसी के भी स्वप्न के भाव नहीं समुझते हैं, कि स्वप्न कौन क्या देखता है, और स्वप्नावस्था में किसी के भी बोध नहीं होता है कि, स्वप्न देखते हैं। तव जो जैसे देखते हैं या करते हैं वह सत्य सत्य वोल के समुझते हैं। उस समय कर्म्मफल जन्म मृत्यु प्रभृति समस्त ही सत्य वोल के स्वीकार करने होगा परन्तु जो अन्तर्य्यामी मायारूप से नानाप्रकार रचना कर के सव को अन्तर में नाना-प्रकार स्वप्न देखाते हैं। वही सव के भाव समुझते हैं। उपरान्त जव वे दश मनुष्य जाग्रत होंगे, तव उनलोग स्वप्न के समस्त हालत मिथ्या वोल के वोध करेंगे और देखेंगे कि, जव स्वप्न के पदार्थ मिथ्या है तव उनको कर्म्मफलाफल प्रभृति समस्त ही मिथ्या है। यदि स्वप्न के० कर्म्म सत्य होता तो स्वप्न के कर्म्मफलाफल

भी सत्य होता, स्वप्न के कर्म्म मिथ्या है बोल के स्वप्न के फलाफल जाग्रत अवस्था में भोग करने नहीं होता।

तैसेही अज्ञान रूप स्वप्न में जिनलोग जो कर्म्म करेंगे, उनलोग के कर्म्मफलाफल जन्म मृत्यु प्रभृति अज्ञान अवस्था ही में बोध वो भोग होगा और यही तव उनलोगों को सत्य सत्य बोलके स्वीकार करने होगा। जव उनलोग जाग्रत या ज्ञानस्वरूप होंगे, तव उनलोगों को और कर्म्मफलाफल जन्ममृत्यु, भोग करने नहीं होगा। तव उनलोग बोध करेंगे कि यदि कर्म्मफलाफल सत्य होता तो भगवदुपासना को प्राप्ति ज्ञान से कर्म्मफलाफल भस्म होकर मुक्तस्वरूप हो जाता क्यों? और जव परमात्मा पूर्ण अनादि विराजमान हैं, उनके सिवाये द्वितीय कोई भी नहीं हैं। तव उनमें कर्म्मफलाफल प्रभृति उनसे भिन्न कौन वस्तु होगा वो कहां हैं? ऐसेही सार भाव समुझ लेंगे। विचारपूर्व्वक देखने होता है कि जव आपलोग या परमात्मा अनादि अनन्त परिपूर्णरूप से विराजमान हैं और जव परमात्मा आपलोगों को लेकर अनादि परिपूर्ण रूप से एकमात्र सत्यस्वरूप हैं, तव आपलोग जन्म मृत्यु कर्म्म फलाफल लेके अनर्थक चिन्ता करके काष्ट क्यों पाते हैं?

ज्ञान, भक्ति वो कर्म्म।

ज्ञान, भक्ति कर्म्म के श्रेष्ठता वो निकृष्टता लेके मनुष्यगण सर्व्वदा झगड़ा ईर्षा में नानाप्रकार कष्ट भोग करते हैं। कोई कहते हैं ज्ञान विना मुक्ति नहीं होता है, ज्ञानही श्रेष्ठ हैं। कोई

कहते भक्ति, कोई कहते कर्म्म हो एकमात्र मुक्तिके उपाय है। इहांपर गम्भीर वो शान्तचित्त से मनुष्य मातही विचार पूर्व्वक सार भाव ग्रहण करिये।

प्रत्यक्ष देखिये, अग्नि के प्रकाश होने से उन्के सङ्ग सङ्ग प्रकाश गुण, उष्णता, दाहिका शक्ति वो शुक्ल, रक्त, कृष्ण वर्ण प्रकाश होता है, अग्नि के निर्व्वाण होने से वे सब गुण सङ्ग सङ्गही में निराकार होता है। और भी देखिये, जाग्रत अवस्था में आप प्रकाशमान होने से आपके सङ्गे सङ्ग आपकी मन बुद्धि अहङ्कार प्रभृति शक्ति गुण क्रिया प्रकाश होता है। फिर आपके सुषुप्ति होने से वे सब गुण क्रिया आपके सहित अभिन्न भावसे कारण में स्थित होते हैं। तैसे ही कोईभी मनुष्य में विवेक उदय होने से उनके सङ्गे सङ्ग ही बिचार या ज्ञान, भक्ति या प्रीति, कर्म्म या साधन अनुष्ठान अपना ही से उदय होता है।

विवेकी पुरुष के जो परमात्मा को प्राप्त होने का इच्छा है, वही प्रीति या भक्ति जानेंगे, और बुद्धि से उनको प्राप्ति के उपाय अनुसन्धान के नाम विचार या ज्ञान। जबतक उनको वो अपने को अभिन्न नहीं देखते हैं, तबतक पर्य्यन्त जो भक्ति पूर्व्वक विचार अनुसन्धान वो दूसरा अनुष्ठान है, वही कर्म्म जानेंगे। यह तिनों में से एक भी न रहे तो कोई भी नहीं रहता। एकके रहने से तिनोंही रहता है। जैसे सुषुप्ति के अवस्थामें ज्ञान नहीं रहता है वोलकर भक्ति वो कर्म्म दोनों नही रहता, जाग्रत में तिनोंही रहता है।

जिनको ज्ञान है उनका भक्ति वो कर्म्म दोनों ही है। जिन्के

भक्ति है उनका ज्ञान कर्म्म दोनों ही है। ज्ञान वो भक्ति विना जो शरीर वो मन के परिश्रम है वह कर्म्म ही नहीं है।

मनुष्य मात्र ही मिथ्या आड़म्बर परित्याग करके ऐसे ही सार भाव को ग्रहण करिये वो जगत के हित साधन में अनुरक्त होके परमानन्द में आनन्दरूप से रहिये।

भेल्की या भोजविद्या में विश्वास।

जो सब अज्ञान अवस्थापन्न मनुष्यलोग अपने इष्टदेव परमात्मा से विमुख हैं, जिनलोग साधुलोगों के निकट से भोजविद्या वो भेल्की देखने का इच्छा करते हैं, और देखकर साधुलोगों को भक्ति अथवा ईश्वर को विश्वास वो भक्ति श्रद्धा करने चाहते हैं। उनलोगको धिक्। वैसे विश्वास को भी धिक् और जिन लोग साधु वनकर ऐसे भेल्की द्वारा विश्वास जन्मा के दूसरे के निकट सेवा करा लेते हैं, और सत्य से आप विमुख होके दूसरे को भी सत्य से विमुख करते हैं, उनलोगों को भी धिक् है। आपलोग विचार पूर्व्वक प्रत्यक्ष ईश्वर के महिमा देखिये कि, जन्म-ग्रहण के पूर्व्व में आपलोग का कोई भी बोधाबोध नहीं था कि आपलोग स्त्री वा पुरुष थें, और ऐसे सृष्टि राज-वादसाहि कभी देखे थें या नहीं। परन्तु अभी प्रत्यक्ष नानाप्रकार सृष्टिब्रह्माण्ड देखने पाते हैं वो दुःख सुख बोध करते हैं। परमेश्वर परमात्मा के यही प्रत्यक्ष नानाप्रकार के लीला वो महिमा देखके भी आप लोगों का ज्ञान अर्थात् उनके उपर विश्वास वो भक्ति नहीं होता है, उनहीं से विमुख हुये हैं और सामान्य भेल्की भोजविद्या

देखके आपलोग उसी भोज वाजीकर मनुष्य के विश्वास वा भक्ति करने का इच्छा करते हैं क्या लज्जा की विषय है। यह क्या ज्ञानी मनुष्यों का उचित कार्य्य है ? यदि ऐसे ही भेल्की देखके साधु को वो भगवान पूर्णब्रह्म ज्योतिःस्वरूप को विश्वास वो भक्ति करना होता तो वेदियालोगों तो नानाप्रकार शक्तिद्वारा भोजविद्या वो भेल्की देखाते हैं, तव वेदियालोगों को क्या भक्ति करना उचित हैं ऐसे करने ही से राजा प्रजा सर्व्व कोई यथार्थ इष्टदेव सत्य परमात्मा से भ्रष्ट होकर भ्रम के वश उच्छन्न गैये हैं वो जाते हैं।

स्त्री, इन्द्रिय वो रिपु।

नामधारी सन्न्यासी प्रभृति जिनलोग के स्वरूपावस्था नहीं हुई है, उनलोग स्त्री, इन्द्रिय वो रिपु जो मित्र है—यह नहीं समुझके द्वितीय सत्य शत्रु वोध से घृणा करते हैं। अथच मुखसे कहते हैं कि, जीव समस्त को एक जान के समदृष्टि से प्रतिपालन करते हैं।

मनुष्य मात्रही चेतन हैं। आपलोग के हिताहित या सत्य मिथ्या वस्तुविचार करने का शक्ति या ज्ञान है। आपलोग के विचार पुर्व्वक देखना उचित है कि, यह आकाशमन्दिर में शत्रु या मित्र, स्त्री, इन्द्रिय वो रिपु, सत्य मिथ्या कौन हैं ? वस्तु पिचार द्वारा सभी को यह समुझना उचित है ; जिन्के वस्तु वोध है, उन्का ज्ञान है ; जिन्के ज्ञान है, उन्का शान्ति है। जिन्के वस्तुवोंध नहीं है, उन्का ज्ञान नहीं है। जिन्के ज्ञान नहीं है, उन्का शान्ति नहीं है।

जो सत्य मिथ्या के अतीत जो वही हैं, उनको लक्ष्य करके शास्त्र में वो लोग व्यवहार में दो शब्द प्रचलित है। एक सत्य, एक मिथ्या। मिथ्या—मिथ्या ही है॥ मिथ्या सब के निकट ही मिथ्या है। मिथ्या से उत्पत्ति लय स्थिति, जीव ब्रह्म, सत्य मिथ्या शत्रु मित्र, प्रभृति होई नहीं सक्ते असम्भव हैं। सत्य एक सिवाय दूसरा नहीं। सत्य स्वतः प्रकाश हैं। सत्य कभी मिथ्या या शत्रु नहीं होते हैं। सर्व्वावस्था में मित्र हो रहते हैं। शत्रुमित्र संज्ञा से अतीत जो हैं वही प्रकाशमान" हैं। अर्थात जो सत्य स्वतः प्रकाश हैं, वही अपने इच्छा से निराकार साकार या कारण सूक्ष्म स्थूल चराचर, स्त्री पुरुष, इन्द्रिय रिपु, नामरूप लेके असीम अखाण्डा-कार सर्व्वव्यापी निर्व्विशेष सर्व्वशक्तिमान पूर्णरूप प्रकाशमान या विराजमान हैं। यही पूर्णसंज्ञा में दो संज्ञा लिया जाता है। एक साकार सगुण, एकनिराकार निर्गुण। निराकार अवस्था में स्त्री पुरुष, इन्द्रिय रिपु, दुःख सुख, शत्रु मित्र, जाति आश्रम, उच्च निच, श्रेष्ठ निकृष्ट ज्ञन नहीं है—ज्ञानातीत है। साकार सगुण ब्रह्म दृश्यमान इन्द्रिय गोचर हैं। इन् में समस्त सम्भाव है। मनुष्य मात्रही को विचार पूर्व्वक समुझना उचित है कि, सर्व्वशास्त्र में इन्ही वर्णित हैं। यही मङ्गलकारी ओंकार विराट परब्रह्म "सहस्र शीर्षा पुरुष" वो "चन्द्रमा मनसो जातश्चचो सूर्य्योह जायतः" इत्यादि वेदमन्त्र में वर्णन है। इस्के भावार्थ यह है कि, ओंकार विराट परब्रह्म के ज्ञाननेत्र सूर्य्यनारायण हैं, चन्द्रमा मन, अग्नि मुख, वायुप्राण, आकाश मस्तक वा हृदय, जलनाड़ी, पृथिवी चरण। यही मङ्गलकारी ओंकार

विराट् परब्रह्म ज्योतिः स्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण—माता पिता गुरू आत्मा परमात्मा से स्त्री पुरुष, ऋषि मुनि प्रभृति जीव समस्त के स्थूल सूक्ष्म इन्द्रियादि युक्त शरीर के उत्पत्ति पालन वो स्थिति होता है, और जो इन्द्रियों के जो गुण वह सब जीव में समभाव से घटता है। इनके सिवाय इस आकाश में द्वितीय कोई सत्य नहीं हैं—जो जीव के गुरु माता पिता आत्मा, शत्रु मित्र, स्त्री इन्द्रिय वो रिपु होंगे। अज्ञान के वश जीव शत्रुमित्र वोध किये रहते हैं।

मङ्गलकारी ओंकार विराट परब्रह्मज्योतिः स्वरूप के जो जो अङ्ग प्रत्यङ्ग द्वारा पुरुष के स्थूल सूक्ष्म शरीर इन्द्रियादि के उत्पत्ति या तइयारी हुई है, सोईसोई अङ्ग प्रत्यङ्ग द्वारा स्त्रीगण के स्थुल सूक्ष्म शरीर इन्द्रिय के उत्पत्ति या तइयारी हुई है। जो जो शक्ति या धर्म्म है वह स्त्री पुरुष दोनों ही में समभाव से घटाताहै। यथा नेत्र द्वारा दर्शन, कर्ण द्वारा श्रवण, नासिका द्वारा श्वास प्रश्वास ग्रहण, पद द्वारा चलना इत्यादि, और क्षुधा पिपासा, भोजन निद्रा, मैथुन जन्म मृत्यु. सुख दुःख इत्यादि जिस्को जो गुण, वह दोनों ही में सम भाव से घटता है। प्रत्यक्ष वस्तु विचार पूर्व्वक देखिये, ओंकार विराट परब्रह्म के चरण पृथिवी से अन्नादि उत्पन्न हो के स्त्री पुरुष जीव समस्त सभी का प्रतिपालन होता है, और उस्के द्वारा स्त्री पुरुष जीव समस्त के हाड़ मांस समभाव से तइयारी होता है। नाड़ीरूपी जल, स्त्री पुरुष जीव समस्त स्नान पान में व्यवहार करते हैं, वो उस्के द्वारा उनलोग के समभाव से रक्त रस नाड़ी होता है। मुखरूपी अग्नि द्वारा स्त्री पुरुष जीव समस्त के क्षुधा पिपासा भोजन, अन्न परिपाक

वो वाक्य उच्चारण समभाव से घटता है। वायु, स्त्री पुरुष जीव समस्त का नासिका द्वार से श्वास प्रश्वास रूप समभाव से चलता है। हृदय वो मस्तकरूपी आकाश द्वारा स्त्री पुरुष जीव समस्त के भितर में खुला आकाश वो कर्ण द्वारा समभाव से ग्रहण होता है। मनरूपी चन्द्रमा ज्योति:द्वारा स्त्री पुरुष जीव समस्त मनरूप से "यह हमारा वह उनके" समुझाते हैं वो सङ्कल्प विकल्प दिन रात्र समभाव से उठता है। स्त्री पुरुष जीव समस्त के मन थोरी सी अन्य-मनस्क होने में कोई भी भाव ही समुझा नहीं जाता है। सन्नासी आदि स्त्री पुरुष सोए जाते उस समय सभी का मन कारण में लय होता है। तब मन न रहने से ज्ञान नहीं रहता है कि, कब शोये थें या कब जागेंगे, हम हैं या वह हैं, ऐसा सृष्टि देखा है, या नहीं इत्यादि कोईभी ज्ञानही नहीं रहती है। जब जागते हैं तब सन्नासी प्रभृति स्त्री पुरुष जीव समस्त मनके द्वारा "हम आराम से सोये थें, हम हैं, वह हैं"। इत्यादि बोध करते हैं। विराट परब्रह्म के ज्ञान नेत्र सूर्य्यनारायण स्त्री पुरुष जीव समस्त के मस्तिस्क सहस्र दल में चेतन होके नेत्रद्वार से रूप ब्रह्माण्ड दर्शन वो सदसत् विचार करके सन्नासी प्रभृति स्त्री पुरुष जीव ज्योति: वो ब्रह्म ज्योति: सूर्य्यनारायण अभेद से कारण में स्थित होते हैं। फिर ज्ञान ज्योति: सूर्य्यनारायण मस्तिस्क में प्रकाश होने से स्त्री पुरुष जीव समस्त चेतन होके ज्ञानरूप से समस्त कार्य्य करते हैं। यही तो प्रत्यक्ष औंकार मङ्गलकारी विराट परब्रह्म ज्योति:स्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण माता पिता के अवतार ऋषि मुनि सन्नासी

प्रभृति स्त्री पुरुष जीव समस्त के अङ्ग प्रत्यङ्ग के समभाव से उत्पत्ति पालन वा स्थिति होता है ।

इहां पर मनुष्य मात्र ही के विचार पूर्व्वक समुझना उचित है, यही जो ओंकार मङ्गलकारी विराट परब्रह्म से स्त्री पुरुष दोनों के स्थूल सूक्ष्म शरीर इन्द्रियादि के उत्पत्ति पालन वो स्थिति होता है, इसमें कौन अङ्ग प्रत्यङ्ग विराट परब्रह्म के पवित्र या अपवित्र स्त्री, इन्द्रिय वो रिपु जानके सन्न्यासी आदि त्याग या ग्रहण करेंगे ; यदि उनलोग वोध करते हैं कि, पृथिवी अंश हाड़ मांस अपवित्र स्त्री इन्द्रिय वो रिपु है. तव छुरि लेके अपना अङ्ग प्रत्यङ्ग पृथिवी के अंश हाड़ मांसमय मल मुत्र विष्टाके पुत्तलि (शरीर) काट काट के त्याग करिये । यदि कहिये कि, जल के अंश रक्त रस नाड़ी अपवित्र स्त्री इन्द्रिय वो रिपु हैं, तो जल के अंश रक्त रस नाड़ी अपवित्र जानके वाहर निकाल के फेकिये । यदि कहिये, अग्नि के अंश क्षुधा, भोजन, परिपाक वाकशक्ति प्रभृति स्त्री, इन्द्रिय वो रिपु हैं तो सन्न्यासी प्रभृति अपना शरीर काट काट के अग्निके अंश वाहर निकाल के फेकिये । यदि कहिये वायु के अंश स्त्री इन्द्रिय वो रिपु है तो सन्न्यासी आपके प्राणवायु को अपवित्र जानके नाक काटिये या शरीर खण्ड खण्ड कर के वायु को वाहर करिये । यदि कहिये आकाश शब्दगुण स्त्री इन्द्रिय रिपु है तो आपके शरीर में जो अकाश कर्णद्वार से शुनने पाते हैं छुरी से उस्को काट के फेकिये यदि कहिये कि, चन्द्रमा ज्योतिः मनही स्त्री, इन्द्रिय वो रिपु, है, तो सन्न्यासी आप के अपवित्र मनको त्याग करिय । यदि कहिये, विराट परब्रह्म के ज्ञाननेत्र सूर्य्यनारायण स्त्री,

इन्द्रिय वो रिपु है तो सन्न्यासी अपना जो जीवरूपी ज्ञान उनको अपवित्र जानके विष खाके मर जाइये। वह होने से ही सर्व्वत्यागी और इन्द्रियजित होंगे।

कौन पदार्थ को स्त्री, इन्द्रिय वो रिपु इत्यादि शत्रु वोध से आपलोग घृणा करके त्याग करने चाहते हैं—सत्य को, या मिथ्या को? और आप, पवित्र कौन पदार्थ होके रहने चाहते? यदि वोध करिये कि, हाड़, मांस स्थुल शरीर स्त्री इन्द्रि यों रिपु है, तो आप समस्तको अपवित्र जानके पूर्व्व के कहे मत छरि से काट काट के फेकिये, सहज में त्याग होगा। यदि सूक्ष्म शरीर इन्द्रियादि को स्त्री इन्द्रिय वो रिपु अपवित्र जानके घृणा करके त्याग करना चाहते हैं; तो स्वयं इन्द्रियादि सूक्ष्म शरीर वाहर करके फेकिये। अथवा यदि वोध करिये, चेतन जीव अपवित्र स्त्री इन्द्रिय वो रिपु हैं, तो आप जो सन्न्यासी चेतन अपवित्र जीव, आप स्वयं अपवित्र को वोध से घृणा करके मृत्यु में पतित हो, तो सहज में स्त्री, इन्द्रिय वो रिपु त्याग होगा; और आप का योग पूर्ण होगा। आप "शिवो हहं सच्चिदानन्दोहहं" द्वितीय सत्य, महाशक्ति या स्त्री संज्ञा परित्याग करके, पूर्ण "एक मेवा द्वितीयं" ब्रह्म पशु बन्‌गे।

हे स्त्री पुरुष मनुष्यगण—आपलोग अपने अपने मान अपमान, जय पराजय, समाजिक मिथ्या स्वार्थ परित्याग करके सारभाव मङ्गलकारी ओंकार विराट, परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण माता पिता के शरणागत होके जगत के हित साधन करिये—जिसमें इन्हीं प्रसन्न होके आपके वो जीव समस्त के सर्व्व प्रकार अमङ्गल दूर करके मङ्गल विधान करें।

इन्द्रियादि, जीव समस्त का कहां तक उपकारी वो मित्र हैं वह न जान के अज्ञानावस्थापन्न मनुष्य शत्रु बोध से घृणा किये रहते हैं। परन्तु यही आकाश मन्दिर में एक सत्य परमात्मा सिवाये द्वितीय कोई शत्रु या मित्र नहीं हैं, होंगे नहीं, होनेका सम्भावना भी नहीं है। यह ध्रुव सत्य सत्य जानेंगे। एक ही सत्य परमात्मा, कारण सूक्ष्म स्थूल स्त्री पुरुष जीव समस्तके स्थूल सूक्ष्म शरीर इन्द्रियादि को लेके पूर्णरूप से विराजमान हैं। इनहीं एक एक अङ्ग या शक्ति या इन्द्रिय द्वारा अन्तर वो बाहर में एक एक प्रकार उत्पत्ति पालन स्थिति घटाके समस्त कार्य्य निष्पन्न करते हैं वो कराते हैं। यदि जीव समस्त के कोई एक इन्द्रिय या रिपु न रहै, तो जीवकी उत्पत्ति पालन प्रभृति कोई भी कार्य्य ही हो नहीं सक्ता है वो जीव के दुःख का अन्त नहीं रहता है। स्त्री पुरुष जीव के एक नेत्र इन्द्रिय न रहने से उस्को जो कितने दुःख है, प्रत्यक्ष अन्धे को देखके समुझ सक्ते हैं। स्पर्श इन्द्रिय न रहने से अथवा मुत्र या कोष्ठ बद्ध होने से जीव का दुःख के अन्त नहीं रहता है बीधर होने से कोई शास्त्र के शब्द ही सुनने नहीं पाते, और कार्य्य में असामर्थ होके नानादुःख भोगते हैं।

काम, क्रोध, लोभ मोह, मद वो मात्सर्य्य जिस्को आपलोग रिपु कहके कल्पना करते हैं प्रत्यक्ष देखिये, यदि उस्के मध्य में काम या रेतः न रहता, तब आपलोग जीव समस्त स्त्री पुरुष अवतार ऋषि मुनि सन्न्यासी आदि कहां से उत्पन्न होते हैं। यही रेतः या काम द्वारा बड़े बड़े अवतार ज्ञानी, राजा, बादसाह वीर पण्डित साधु ऋषि मुनि, स्त्री पुरुष उत्पन्न होके आपलोगों

का मङ्गल करते है। यही काम रेत: आपलोग के शत्रु हैं न मित्र हैं ? मन्में काम न रहने से कोईभी कल्याण ही सिद्ध नहीं होती हैं। क्रोध न रहने से ब्रह्माण्ड के अनेक कार्य्य होई नही सक्ते। सात्त्विक भाव से यदि नोकरों को कार्य्य करने कहिये, वह लोग कार्य्य में अनादर करके समय गवावेंगे। परन्तु यदि तामसिक या राजसिक क्रोध भाव से प्रकाश करिये कि, यह काम करने ही होगा, न तो दण्ड देंगे, तव क्रोध शक्ति के भय से तुरन्त ही कार्य्य सम्पन्न होगा। यदि लोभ शक्ति न रहै तो किसी के भी लेने देने का आकर्षण नही रहता है। मोहशक्ति न रहने से माता पिता, पुत्र कन्या, राजा, प्रजा, गुरुशिष्य, परमात्मा जीव स्त्री, पुरुष प्रभृति के परस्पर प्रेम भक्ति के आकर्षण शक्ति नही रहता है। जवतक मोह शक्ति है, तव तक जीव माता पिता गुरु राजा स्त्री पुत्र या शिष्य या प्रजा इत्यादि जानके, परस्पर प्रेम भक्ति करनी में, विद्याशिक्षा देने में वो रक्षा या पालन करने में यत्नवान् होके ब्रह्माण्ड के समस्त कार्य्य सम्पन्न किये रहते हैं। मात्सर्य्य शक्ति या गुण के सम्पूर्ण अभाव होने से उन्नति वन्द होता है। सिद्ध के जो स्वाभाविक लक्षण है साधक के वही साधन हैं "मैं सिद्ध के तरह सिद्ध होंगे" एसा संकल्प के अभाव से कैसे उन्नति होगी ? भय शक्ति के अभाव से माता पिता या परमात्मा के प्रिय कार्य्य साधन, मान प्रतिष्ठा रक्षा, आज्ञा पालन प्रभृति प्रेम भक्ति के कोई कार्य्य ही नही होगी। अज्ञानावस्थापन्न मनुष्य जो करते वह भय या लोभ से करते हैं। समदर्शी ज्ञानी जीव मात्रको अपने आत्मा परमात्माके स्वरूप जानके कर्त्तव्य कार्य्य समुझके निष्काम भाव से ब्रह्माण्ड के

समस्त हितकर कर्म्म करते वो परोपकार में रत रहते हैं और कोई फल वो इच्छा न करके निर्लिप्त भाव से मुक्त स्वरूप रहते हैं। लज्जा शक्ति न रहने से कोई किसो के भी मान्य नहीं रखेंगे, यथेच्छा व्यवहार करेंगे। यही समस्त रिपु जीव के उपकारी है। इस आकाश में शत्रु कोई नहीं हैं। रूपान्तर उपाधि भेदसे अज्ञानावस्थापन्न मनुष्य, क्या सन्नासी, क्या गृहस्थ, शत्रु मित्र वोध किये रहते हैं। समस्त ही परब्रह्म से प्रकाश होता है, परब्रह्म ही के स्वरूप हैं, परब्रह्म ही में स्थित होंगे वो परब्रह्म ही में हैं। समदर्शी ज्ञानवान मनुष्य देखते हैं, निराकार साकार, कारण सूक्ष्म, स्थूल, स्त्री पुरुष जीव समस्त नामरूप या अपने आत्मा परमात्मा के स्वरूप जानके जो शक्ति के जो कार्य्य या जो कार्य्य के जो उपकारी है उसके द्वारा सोई कार्य्य ही करते हैं वो कराते हैं। ज्ञानीलोग समस्त कर्म्म ही करते, अथच जानते, कि हमलोग कुछ ही नहीं करते हैं। जिस समय जो शक्ति प्रकाश करने से जो कार्य्य सम्पन्न होता है उस समय में उसी शक्ति प्रकाश करके सोई सोई कार्य्य सम्पन्न करते हैं। यथा :—पृथिवो शक्ति द्वारा पृथिवी के कार्य्य जल शक्ति द्वारा जल के कार्य्य, अग्नि शक्ति द्वारा अग्निके कार्य्य इत्यादि। स्त्री पुरुष ज्ञानिगण समस्त शक्ति ब्रह्मरूप जानके व्यवहार करते हैं। परन्तु जल शक्ति द्वारा अग्नि के या अग्नि शक्ति द्वारा जलके कार्य्य करने में यत्न नहीं करते हैं। जो इन्द्रियों के जो गुण या धर्म्म हैं उसके विपरीत करने नहीं चाहते हैं। जो इन्द्रिय के जो गुण या धर्म्म है सोई इन्द्रियों के द्वारा सोई कार्य्य विचार पूर्व्वक उत्तम रूपसे सम्पन्न करते

हैं। जो जीवका जो अभाव उसी वखत विचार पूर्व्वक वह मोचन करते हैं यही होने से शमदर्शी ज्ञानीका लक्षण है। वह ज्ञाननेत्र से देखते हैं कि, यही आकाश मन्दिर में मित्र सिवाये शत्रु नहीं हैं। स्त्री पुरुष जीव समस्त को अपने आत्मा परमात्मा के स्वरूप जानके समभाव से प्रेम पूर्व्वक प्रतिपालन करते हैं। किसी को भी स्त्री पुरुष उच्च नीच श्रेष्ठ निकृष्ट समुझके घृणा नहीं करते हैं। जैसे घृत सबके उपकारी है और देह का पुष्टिकर है, परन्तु जिनलोग के ज्वर पिलहि यकृत रोग है उनलोगोंके पक्ष में सोई घृत अनुपकारी या शत्रु बोध होता है। बाद ज्वर पिलहि अराम होने से सोई घृत ही सोई जीवके उपकारी वो मित्र बोध होता है। ऐसे रूपान्तर भेद से उपकारी अपकारी मित्र शत्रु, एक ही घृतरूपी सत्य या जीवात्मा बोध होता रहता है।

जबतक गउ दुध देती है तबतक गृहस्थलोग गउ को मित्र कहते या स्नेह करते हैं। जब गउ दुध नहीं देती या वृद्धावस्था प्राप्त होती है तब सोई गउ गृहस्थलोगों का भार या शत्रु होती है और गृहस्थ उनको घृणा करके त्याग करते हैं। युवती स्त्री को यौवनावस्थामें पुरुषलोग अति प्रिय मित्र जान के स्नेह करते हैं। वही स्त्री वृद्धा होने से या कोई दोष करने से पुरुष घृणा करके त्याग किये रहते हैं। जिन्के नाम स्त्री संज्ञा है उनको यदि पुरुष स्नेह या प्रेम करते तो शिशु, युवा वो वृद्धा, दोषी निर्द्दोषी, सब अवस्था ही में उन्को स्नेह या प्रेम करते। तैसे ही स्त्रीगण पुरुषके उपर व्यवहार करते और दोनों ही समदर्शी ज्ञानी होते। जब आपलोग परस्पर दोष क्षमा करने नहीं सके,

तव आपलोग के दोष भगवान क्षमा कैसे करेंगे ? ऐसे ही पुत्र कन्या, लौकिक माता पिता या भगवान माता पिता गुरु को अवस्था विशेष में प्रीति करते या प्रेम भक्ति करते हैं रुपैया पयसा देने से माता पिता या भगवान को प्रेम भक्ति करते हैं नहीं देने से माता पिता या भगवान गुरु को घृणा करके त्याग करते हैं। ऐसे ही सर्व्व विषय में उत्तमरूप से भाव ग्रहण करके जगत के हित साधन में यत्न करिये। जिसमें जीव समस्त शान्ति पावे।

ओं शान्तिः ओं शान्तिः ओं शान्तिः।

आर्य्यजाति के अधःपतन।

हिन्दु, मुसलमान, इसाई, स्त्री, पुरुष मनुष्य मात्र ही अपने अपने मान अपमान, जय पराजय, समाजिक मिथ्या, स्वार्थ परित्याग करके गम्भीर वो शान्त चित्तसे सारभाव ग्रहण करिये, जिसमें जगत का अमङ्गल दूर होके मङ्गल विधान होवे। सत्य से भ्रष्ट होकर ही आर्य्य हिन्दुगण अधःपतित हुए हैं। भगवान छोड़ के तो कुछ भी हो ही नहीं सके, परन्तु उपाधि भेद से नामधारी सन्यासी ही इस अधःपतन के कारण हैं।

भेखधारी सन्न्यासीलोग जगत को शिक्षा देते हैं कि, कर्म्म अग्नि यज्ञ प्रभृति वो काली दुर्गा जगद्धात्री गायत्री सावित्री जिनके नाम है वह महाशक्ति जगत जननी को त्याग न करने से जगत को मङ्गल या सन्यासी अर्थात् "शिवोहहं सच्चिदानन्दोऽहहं" संज्ञा पूर्ण नहीं होता है। यह विषय में मनुष्यमात्रही

का विचार पूर्व्वक समुझना उचित है कि, गृहस्थ सन्नासीगण कोई भी अग्नि विना एक पदभी अन्धकार में चलने नहीं सके। और सावित्री महाशक्ति जगतजननी नेत्र के ज्योतिः सङ्कोच करने से सन्नासी प्रभृति सुषुप्ति अवस्थामें ज्ञानातीत भाव से सोते रहते हैं। तव किसी के भी कोपीन के खवर नहीं रहता है। कोई भी तव समुझने नहीं सके कि, मैं कव से सोतेथें, कव जागेंगे, मैं "शिवोहहं सच्चिदानन्दोहहं" मैं या वह हैं, ऐसा दृष्टि देखा हैं या नहीं, फिर जव सावित्री महाशक्ति जगत जननी जीव समस्त के मस्तिस्क में चेतना देते या प्रकाश करते हैं, तव सन्नासी प्रभृति जीव का ज्ञान होता है कि, मैं आनन्द आराम में शोतेथें और मैं हूं वो वह हैं इत्यादि। इस तरफ कहते कि, कर्म्म, अग्नि यज्ञ प्रभृति वो सावित्री महाशक्ति जगत जननी को त्याग करने से तव सन्नासी योग वो "शिवोहहं सच्चिदानन्दोहहं, या भैरव संज्ञा पूर्ण होंगे। परन्तु कर्म्म विना स्थूल शरीर ही नहीं रहता है. नष्ट हो जाता है। कर्म्म को त्याग कैसे करेंगे? मर जाने से तव कर्म्म त्याग होगा। न तो होनेका नहीं है। त्याग ग्रहण को इच्छा भी कर्म्म है।

जो सत्य मिथ्या के अतीत जो वही हैं, उन्हीं को लक्ष्य करके शास्त्र में वो लोग व्यवहार में दो शब्द प्रचालित है। एक सत्य, एक मिथ्या। मिथ्या मिथ्या ही है। मिथ्या कभी भी सत्य नहीं होता है। और सत्य सत्य ही है सत्य कभो भी मिथ्या नहीं होते। समुझ के देखिये, सन्नासी प्रभृति मिथ्या होकर सत्यको त्याग करते हैं या सत्य होकर सत्य को त्याग करते हैं। अथवा मिथ्या होकर मिथ्या को त्याग करते हैं या सत्य होकर

सत्य को त्याग करते हैं ? यदि कहिये कि मिथ्या होकर मिथ्या को त्याग करते हैं, तो आप मिथ्या हैं, आप के विश्वास धर्म्म कर्म्म वो आपके उपदेश इत्यादि समस्त ही मिथ्या है। क्यों कि मिथ्या से सत्य की उपलब्धि नहीं होता है, और मिथ्या से त्याग ग्रहण होंहो नहीं सक्ता—असम्भव है। सत्य से ही सत्य का उपलब्धि होता है। सत्य स्वतः प्रकाश हैं, सत्य एक शिवाय दूसरा नहो हे सत्य अपनी इच्छायों से निराकार से साकार, साकार से निराकार या कारण से सूक्ष्म, सूक्ष्म से स्थूल नाना नामरूप चराचर स्त्री पुरुष को लेकर असीम अखण्डाकार सर्व्व-व्यापी पूर्णरूप से विराजमान हैं। यही पूर्ण संज्ञा में दो संज्ञा है—एक निराकार निर्गुण एक साकार सगुण हैं। इनही का नाम परब्रह्म। इनके सिवाय द्वितीया सत्य इस आकाश में नाम रूप, प्रकाश, त्याग या ग्रहण होही नहीं सक्ती, असम्भव है। तब कर्म्म, अग्नि, यज्ञ, स्त्री वो सावित्री जगत जननी कौन वस्तु वोध से अवोध सन्न्यासी "शिवोहहं सच्चिदानन्दोहहं" होकर त्याग करते वो कराने चाहते हैं ? पहिले सन्न्यासी प्रभृति स्वयं ही सत्य या मिथ्या हैं, त्याग या ग्रहण वो "शिवोहहं सच्चिदानन्दोहहं" किस्को कहते हैं वह उत्तमरूप से विचार करके समुझिये तव मनुष्यलोगों को त्याग ग्रहण प्रभृति विषय में शिक्षा देंगे। सन्न्यासी प्रभृति स्वयं सत्य से भ्रष्ट होके अहङ्कार के उपर आरूढ़ हुये हैं और मैं हूं, वह निकृष्ट इत्यादि वोल कर अज्ञान नरक में डूवकर त्याग वो ग्रहण प्रतिपादन करते हैं। इनलोग स्वयं भ्रष्ट हैं वो जगत को भ्रष्ट करते हैं।

सृष्टि, पालन, स्थिति, लय वो मङ्गलामङ्गल के हर्त्ता कर्त्ता

अर्थात निराकार नाना नामरूपात्मक एक सत्य परब्रह्म विराट ज्योतिःस्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण के कर्म्म, यज्ञ, अग्नि वो सावित्री जगत जननी भिन्न भिन्न नाम मात्र है। समस्त उत्तम कार्य्य करके भगवान के निकट उस्के फल नहीं मागने को कर्म्म त्याग या मुक्ति जानेंगे।

परमात्मा या भगवान के आज्ञा लङ्घनकारी साधु सन्नासी प्रभृति को पूर्व्वोक्त राजा के वागान की दो मली के दृष्टान्त मत सत्‌शिक्षा देना उचित है। गवर्णमेण्ट राजा जमीनदार, धनी, महाजन लोग विचारपूर्व्वक सकल नामधारी साधु; सन्नासी परमहंस प्रभृति को दया करके सत् उपदेश दिजिये कि, "जिसलिये आपलोग तपस्यादि करते थें वह पूर्ण हुआ, और ऐसा तपस्या प्रपञ्च करने से कार्य्य नहीं होगा"। और आपलोग सर्व्वप्रकारसे उनलोगों को पालन करिये। इनलोग नाना कारणों से साधु सन्नासी वनते हैं। कोई तो इस्को आनन्द वोध करते हैं कि, साधु सन्नासी परमहंस प्रभृति सं वननेसे गृहस्थगण भय वो भक्ति करेंगे और मलाई रावरी खोआ इत्यादि उत्तम उत्तम पदार्थ भोजन करने को देंगे और नाना प्रकारके सेवा खिजमतभी करेंगे। और भी मनमे करते हैं कि, योग पूर्ण होने से स्वर्गमें अच्छी अच्छी सुन्दरी स्त्रीयां मिलेगी या सती सीता सावित्री पार्व्वती को प्राप्त होंगे या "शिवोहहं सच्चिदानन्दोहहं" होंगे या हर्त्ता कर्त्ता विधाता होंगे। अतएव कोई तो स्त्री के मर जानेकी शोचसे, कोई काम करने का डरसे, कोई खाने न पाकर, कोई चोरी डाकाइति करने के लिये, कोई राजाके जुलुम से, कोई खुन करके, कोई रूपेये पेसे के लिये,

कोई मानके लिये इत्यादि नानाकारणों से मनुष्यों माता पिता परिवार वर्गों को कष्ट देकर साधु सन्नासी प्रभृति का भेख धारण करते हैं। कडोडों में एक आदमी ज्ञान मुक्ति के लिये या परमात्मा को मिलने के लिये अथवा जगत का हितसाधन करने के लिये प्राणपणसे यत्न करते हैं। बहुत ही भण्ड होते हैं।

जिनलोग जगत हितके लिये या ज्ञान-मुक्ति वो परमात्मा में अभेद होने के लिये इच्छा करते हैं, उनलोग कोई प्रकार का भेखकी आड़म्बर नहीं करते। उनलोग निश्चल निर्म्मल सरल स्वभावयुक्त हैं। उनलोग मिथ्या प्रवञ्चना नहीं करते, या कोई प्रकार का गृहस्थ लोगों को भेल्की भोजविद्या देखाकर प्रपञ्चना नहीं करते हैं। अथवा अपरको कष्ट देकर अपना सुख या सेवा नहीं करा लेते। उनलोग प्राणरक्षाके लिये एक मुठी अन्न ग्रहण करते हैं और शरीर या लज्जा निवारण के लिये एक टुकरा वस्त्र धारण करते हैं। सत्य मधुर वचन बोलते और बोलवाते हैं। कोई प्रकार का प्रपञ्च नहीं करते। स्त्री पुरुष जीव समूहकी जिसरूप अङ्गप्रत्यङ्ग वो रूप भगवान् तद्दआरी की हैं, वैसेही स्वाभाविक भाव रहते हैं; और जो अङ्गप्रत्यङ्ग द्वारा जो कार्य्य निष्पन्न होता है, वैसेही करने का उपदेश देते वो जगत को सत्शिक्षा देते हैं। परमात्मा का ऐसे प्रियभक्त, कोटीनें में एक आदमी नजर आता है। स्त्री पुरुष मनुष्य मात्रही ऐसे समदृष्टि सम्पन्न लोगों को भक्तिपूर्व्वक सेवा प्रभृति करना उचित है।

हिन्दुगण मुहसे केवल बोलते हैं कि, उत्तमकार्य्य करना उचित है जिंससे अपना वो जगत साधारण का हित होये। परन्तु

आपलोग विचारपूर्व्वक देखिये, हिन्दु मुसलमान सन्न्यासी प्रभृति अपने अपने वस्त्र मन घर शय्या रसता प्रभृति वो भोजन के सामग्री समस्त ही अपरिस्कार रखके व्यवहार करते हैं और नाना रोगमें गिरकर कष्टभोग करते हैं। भगवानके आज्ञाधीन इंरेज वहादुर अपना अङ्गप्रत्यङ्ग उत्तम रूप से भितर वाहर परिस्कार करते हैं, और घर शय्या, वस्त्र, रस्ता घाट वाजार ग्राम सहर, भोजन के सामग्री प्रभृति कर्म्म द्वारा परिस्कार करते हैं वो कराते हैं। इनलोग अपना वो साधारण के उपकारार्थ रेल जाहाज टेलिग्राफ् स्कुल डाकघर हसपिटाल धर्म्मशाला जलके कल इत्यादि द्वारा सकल प्रकार का जगतके हितसाधन करते हैं। ऐसे परमात्मा के प्रिय प्ररोपकारी लोगों की सर्व्वप्रकार के मङ्गल, तेज; वल, बुद्धि, ज्ञान या मुक्ति होगा। जिनलोग अति अपरिस्कार, स्वयं अपने सर्व्व-विषय परिस्कार नहीं करते या दूसरे से भी नहीं करालेते और द्वेष हिंसा परनिन्दा परायण, दूसरे के दुःखमें सुखि वो दूसरे के सुख में दुःखी, ऐसे आज्ञालङ्घनकारी को भगवान उत्तम रूपसे दण्ड देंगे—जिसमें उनलोगों का चेतना हो।

जिनलोग अपने अपने परिश्रम से पाच मनुष्य को प्रतिपालन करते हैं, क्षुधातुर लोगों को समय मत यथासाध्य अन्नजल देते हैं, दिन रात्र में एक वार भी भगवान को स्मरण करते हैं—ऐसे परमात्मा के आज्ञापालनकारी गृहस्थगण को भगवान प्रसन्न होकर पेन्सनरूप ज्ञानमुक्ति देंगे, नहीं तो आज्ञालङ्घनकारी साधु सन्न्यासी प्रभृति अकर्म्मण्यगण को पेन्सनरूप ज्ञानमुक्ति देंगे? आज्ञापालनकारी गृहस्थगण

ही को भगवान प्रसन्न होकर ज्ञानमुक्ति देंगे अर्थात पुनर्जन्म नहीं देंगे। आज्ञालंघनकारी साधु सन्नयासी प्रभृति को इहलोकमें दण्ड वो पुनः पुनः जन्म देंगे।

गवर्णमेण्ट, राजा जमीनदार महाजन लोगों को ऐसे भगवान के आज्ञा लङ्घनकारी साधु सन्नयासीगणों को सदुपदेश देके जो राज्यका जो प्रजा हैं उसी राज्य में उस्को माता पिता परिवार-वर्गके निकट पंहुचादेना उचित हैं, जिसमें वह लोग अपनी माता पिता को भक्तिपूर्ण सेवा करके मनुष्य धर्म्म प्रतिपालन करें। उनलोग के माता पिता परिवारवर्ग को भी शिक्षा देना उचित है—जैसे उनलोगों को ग्रहण करें, उनलोगों का जात नहीं गिया हैं। यदि उनलोग के माता पिता सम्मत होकर ग्रहण करें तो अच्छाही है, नहीं तो अपनी अपनी राज्य या अधिकार में ऐसे व्यवस्था करेंगे, जिसमें उनलोग परिश्रम द्वारा जीविका निर्व्वाह करने में सक्षम हो, कोई प्रकार से अन्न वस्त्र का कष्ट न पावें। बड़े बड़े बागीचा या क्षेत्र प्रस्तुत करके जो जिस काम के लायेक हो उसी को वही काम में नियुक्त करके उनलोगों से अन्न वस्त्र फल फुल उत्पन्न कराके उनही के उपस्वत्व से उनलोगों को उत्तमरूप से प्रतिपालन करना और विद्याशिक्षा वो विवाहादि देना उचित है। यदि भेखधारी साधु सन्नयासी प्रभृति ऐसे करने में अस्वीकार करें, तो राजागणकी राजशक्ति से वेत्राघात करते करते काम करा लेना उचित है, जिस से परमात्मा या भगवान के आज्ञा पालन वो जगत के हितसाधन होये। यदि राजा होके सामान्य भेखधारी साधु सन्नयासी परमहंस प्रभृति को भय के वश ताड़ना द्वारा काम नहीं करालें तो ईश्वर के निकट

दोषी होना होता है। यह तेजहीन मनुष्य का कार्य्य है ; तेजस्वी सम दृष्टि ज्ञानवान राजा या सिंह पुरुष का कार्य्य नहीं है।

राजा स्वयं स्वत: प्रकाश परब्रह्म के अंश या परब्रह्म की स्वरूप हैं। भगवान के आज्ञा लङ्घनकारी भेखधारी साधु सन्नासी परमहंस प्रभृति कोटि युग तपस्या करने से भी यथार्थ साधु सन्नासी परमहंस पद या अवस्था प्राप्त नहीं होंगे और राजा लोगों के तरह शक्तिमान भी नहीं हो सक्ते। राजा का ऐसा सामर्थ है कि, यदि कोई एक थो पिपड़ा को बध करें, तो विचार पूर्व्वक उस्को फांसि जेहल जुता या वेत्राघात दे सक्ते हैं। ऐसे ही अवस्था में राजा यदि ईश्वर के आज्ञा लङ्घनकारी विद्रोही प्रजा या ऋषि मुनि को तरह विचार के फलों में तोप से खण्ड खण्ड करके उड़ा दिजिये, तो भी ईश्वर के निकट निर्दोषी है।

नाना कल्पित धर्म्म के कपट कर के जिनलोग स्वार्थ के वश मनुष्यगणों को नाना प्रकार कष्ट देते हैं और बोलते हैं कि, हमारे धर्म्म में ज्ञात मत दो उनलोग का वचन सुन के राजा चुप रह जायेंगे, न सदसत् विचार करके सत्य को धारण वो मिथ्या को त्याग करेंगे ? चोर डाकु मिथ्यावलम्बी प्रभृति यदि बोले कि, चोरी आदि हमारा धर्म्म है, तो राजालोग चुप रहेंगे, न विचार पूर्व्वक उनलोगों को दण्ड दे कर सत्यवादी प्रजागणों को रक्षा करेंगे। ऐसे ही कल्पित मिथ्या धर्म्मावलम्बीगणों का वचन सुनके राजागणों को भय रहना उचित है, न विचार पूर्व्वक उनलोगों को दण्ड देना उचित है ? ऐसे विषय में राजागणों को उत्तमरूप से समुझके चलना कर्त्तव्य है।

दोषी निर्दोषी कैसे होते हैं? यदि कोई मनुष्य खुन प्रभृति नाना प्रकार दोष करें और वही दोषी पुरुष राजा के निकट शरणागत होकर क्षमा भिक्षा मागें और राजा यदि उनको क्षमा न करके दण्ड दें तो वही पुरुष दोषी है। राजा दया वश सब अपराध क्षमा करके उनको छोड़ दें तो वही पुरुष निर्दोषी हैं। ऐसेही जीव समुह स्त्री पुरुष नाना दोष या अपराध करते हैं। यदि इनलोग भक्ति पूर्व्वक निर्म्मल भाव से मङ्गलकारी ओंकार बिराट परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप चन्द्रमा सूर्य्य-नारायण गुरु के शरणागत होकर क्षमा भिक्षा मागें कि, "हे भगवान! माता पिता! हमारा सब अपराध क्षमा करिये। यही आकाश मन्दिर में आपके सिवाये दूसरा सत्य कौन हैं जो हमलोगों का अपराध क्षमा करेंगे?" यदि ज्योतिःस्वरूप दण्ड दें या जीव को जन्म मृत्यु दें, तो जीव दोषी या अपराधी हैं। यदि वह जीव समुह के सब अपराध अपने गुणों से क्षमा करके उनलोग को छोड़ दें तो वह जीव निर—अपराध हैं—उनलोग का जन्म मृत्यु नहीं है। भगवान के इच्छा दण्ड दे भी सक्ते, नहीं भी दे सक्ते हैं। दण्ड देन से दोषी, क्षमा करने ही से निर्दोषी, हैं। पाप पुन्य, दोषी निर्दोषी भगवान ज्योतिःस्वरूप के आयत्ताधीन हैं। इन के शरणागत जीव सर्व्वपाप से मुक्त जानेंगे। एक सत्य के सिवाये दूसरा सत्य नहीं हैं। इच्छामय का जो इच्छा कर सक्ते हैं। दूसरा सत्य कोई नहीं हैं, जो मना करेंगे।

राजा प्रजा सभी मिल कर ईश्वर या परमात्मा को चिन्ह के उनके शरणागत होकर उनके निकट क्षमा या जगत के हित-

साँधन रूप उनके प्रिय कार्य्य करिये। अग्नि ब्रह्म में आहुति दिजिये, जिस्से वायु परिस्कार होये। जीव समुह को अपने आत्मा परमात्मा की स्वरूप जानकर उत्तमरूप से परस्पर को प्रतिपालन करिये। सर्व्व विषय में मन शरीर वस्त्र शय्या घर भोजन के द्रव्यादि परिस्कार रखके व्यवहार करिये। 'ओं सत् गुरु" मन्त्र स्त्री पुरुष वालाक हृद्ध सर्व्वलोगों जप करिये। प्रात वो सायंकाल में उदय अस्त में ओंकार मङ्गलकारी विराट पर-ब्रह्म ज्योतिःस्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण जो जीव समस्त के माता पिता आत्मा हैं उनके सन्मुख में स्त्री पुरुष मनुष्य मात्र हो कर जोर के भक्तिपूर्व्वक दण्डवत् प्रणाम, नमस्कार करके प्रार्थना करेंगे कि,—"हे पूर्ण सर्व्वशक्तिमान परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण गुरु पिता माता आप ही निराकार साकार जीव समस्त को लेकर पूर्णरूप से विराजमान हैं। आप को वारम्बार पूर्णरूप से जय होये। आप अपने गुणों से हम लोगों का सब अपराध क्षमा करके परमानन्द में आनन्द रखिये वो शान्ति विधान करिये।"

यही विराट परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप चन्द्रमासूर्य्यनारायण ही हिरन्मय या ओंकार वैश्वानर अग्नि प्रभृति नाम से कल्पित हुयें है। इन्हीं निराकार साकार पूर्णरूप से जो हैं वही प्रकाशमान हैं। इन्हीं से जीव समस्त उत्पत्ति, पालन, वो स्थिति हैं। इन्हीं स्त्रीपुरुषके माता पिता गुरु आत्मा परमात्मा हैं। इन्हीं को सन्न्यासीगण अभेदसे एक सत्य नही जानेंगे निराकार एक सत्य हैं, साकार द्वितीय सत्य हैं और कर्म्म यज्ञ अग्नि स्त्री सावित्री सती सीता प्रभृति तृतीय सत्य हैं जानकर

आप परित्याग करके दूसरे को भी परित्याग कराते हैं। इस लिये जगत में अमङ्गल वो अधःपतन घटता है। रामायण में लिखा है कि, रावण सन्न्यासी के भेख धारण करके सती सीता सावित्री को हरण किये अर्थात अहङ्कारी रावण अज्ञान में पड़के यही जो सती सीता सावित्री जगत के मङ्गलकारिणी, जो जीव समस्त को लेकर ज्योतीरूप से प्रकाशित हैं। इनको आप परित्याग करके अपर को परित्याग कराते हैं। यही जगत में यदि एक मनुष्य भी हरिभक्त हनुमान या इन्द्रियजित महात्मा होकर यही जो ओंकार विराट परब्रह्म सूर्य्यनारायण प्रकाशमान हैं, इन्हीं को भक्तिपूर्व्वक पांच कर्म्मेन्द्रिय पांच ज्ञानेन्द्रिय मन वो बुद्धि यही बारह कला रूपसे निगल जाते वा हृदयमें धारणकरते वा अभेद से एक पूर्ण रूप दर्शन कर सक्ते हैं तो अहङ्कार रावण को वध करके सती सीता सावित्री जगज्जननी को उद्धार करने में समर्थ होंगे। एक सत्य ओंकार पुरुष बारह कला लेकर अनादिकाल से पूर्णरूप प्रकाशमान हैं। शास्त्रके रूपक भवार्थ न समुझ के इनको छोड़कर वनके वान्दर या हनुमान को श्रेष्ठजानके पुजा करते हैं, और आर्य्य-हिन्दुगण वान्दर या हनुमान हो गेये हैं। बाल्मीकि रामायण में स्पष्टही लिखा है कि, रामचन्द्र अनेकवार रावण को वध किये परन्तु रावण किसी तरह से वध नहीं भये। अगस्त्यमुनिने वहां आकर रामचन्द्रको सदुपदेश दिये कि हे रामचन्द्र! आप अपने स्वरूप को भुल गेयें हैं। आप सूर्य्यनारायण से उत्पन्न हुये हैं सूर्य्यवंशी हैं सूर्य्यनारायण आपके इष्टदेवता हैं, उनको प्रणामपूर्व्वक अर्घ देकर आज्ञा ग्रहण करिये, तब रावण

कोन्ध कर सकेंगे। रामचन्द्र वही उपदेश मत सूर्य्यनारायण के निकट आज्ञा लेकर रावण को वध किये। मनुष्य लोग यह भी कहते है कि रावण सूर्य्यनारायण के अंश यत्किञ्चित् अग्नि हनुमानके पोंछमें लगा दिये तो हनुमान मरने के भय से प्राण-रक्षा के लिये समुद्र में कुद पड़े। अग्निके तेज से समुद्र का जल शुख गेआ और जलचर जीव जलने लगे। भगवान चन्द्रमा सूर्य्यनारायण विराट परब्रह्म दया करके रक्षा करते हैं तब हनुमान वो जलजन्तु रक्षा पाते हैं। यहां पर विचार पूर्व्वक समुझना उचित है कि, ओंकार मङ्गलकारी विराट परब्रह्म चन्द्रमासूर्य्यनारायण को वारह कला हनुमान निगल गये हैं, अथच सूर्य्यनारायण के यत्किञ्चित् अंश अग्निद्वारा हनुमानका प्राण संकट में पडीथी—यह कैसा आश्चर्य्य है। जो ब्रह्माण्डके हर्त्ता कर्त्ता विधाता या नियन्ता वही ओंकार मङ्गलकारी विराट परब्रह्म वारह कला सूर्य्यनारायण अनादि तेजमय ज्योतिःस्वरूप को कैसे एक सामान्य पशु वान्दर या हनुमान सत्य सत्य निगल गये या वगल में धारण किये? यह क्या कभी भी सम्भव हो सक्ता है? रूपक के भावार्थ न समुझ कर अनादि सत्य पुरुष ज्योतिःस्वरूप को वान्दर या हनु-मान निगल गये वोल कर उपहास करना और इनसे विमुख हो के हिन्दुगण अधःपतन हुये हैं। सर्व्व विषय में सार भाव ग्रहण करके कार्य्य निष्पन्न करिये।

सूर्य्यनारायण से रामचन्द्र उत्पन्न हुये थें, इस लिये राम-चन्द्र को सूर्य्यवंशी कहते हैं। चन्द्रमा से कृष्ण भगवान उत्पन्न हुये थें, इसलिये कृष्ण भगवान को चन्द्रवंशी कहते हैं। स्त्री

पुरुष जीव समुह चन्द्रमा सूर्य्यनारायण से उत्पन्न होते हैं। जीवमात्र चन्द्रवंशी या सूर्य्यवंशी हैं। स्त्री पुरुष जो जीव गार्हस्थधर्म्म प्रतिपालन करते हैं और भगवान में जिनको निष्ठा है वो ज्ञान मुक्ति का इच्छा है, वही सूर्य्यवंशी हैं। सत्य भ्रष्ट हो कर केवल मात्र कैलास वैकुण्ठ प्रभृति सुख भोग करने का इच्छा करते, और परस्पर द्वेष हिंसा निन्दा ग्लानि करके अशान्ति भोग करते हैं, ऐसेही अवस्थापन्न स्त्री पुरुष जीव समुह को चन्द्रवंशी जानेंगे। उभय ज्योतिः ही एक ओंकार विराट परब्रह्म है। उभयमें समान भाव से प्रेम भक्ति रखना उचित हैं। साकार निराकार में पूर्णरूप से निष्ठा ही कल्यानकर है।

ओं शान्तिः! ओं शान्तिः!! ओं शान्तिः!!!

सर्ब्ब शास्त्र के सार।

मनुष्य मात्र ही अपने अपने मान अपमान, जय पराजय, समाजिक मिथ्या स्वार्थ परित्याग करके गम्भीर वो शान्तचित्त से सारभाव ग्रहण करिये अर्थात् अपने इष्टदेवता को चिन्ह के उनके निकट क्षमा वो शरण भिक्षा करिये जिससे जगत के अमङ्गल दूर होके मङ्गल विधान होये वो जीव समस्त सद्‌भाव में एक मत होके परस्पर मङ्गल चेष्टा करके शान्ति लाभ करें।

विचार पूर्ब्बक समुझिये, मिथ्या मिथ्या ही है मिथ्या कोई काल में ही सत्य नहीं होता। मिथ्या सभी के निकट मिथ्या है, मिथ्या से उत्पत्ति, पालन, स्थिति, मङ्गलामङ्गल, जीव या इष्टदेवता ब्रह्म प्रभृति कुछ भी हो नहीं सक्ते हैं, होना असम्भव

हैं। सत्य स्वतः प्रकाश हैं, सत्य कभी भी मिथ्या नहीं होते हैं। स्वरूप पक्ष में सत्यके उत्पत्ति, पालन, वो लय हो नहीं सक्ता असम्भव हैं। रूपान्तर उपाधि भेद में सत्य से समस्त ही हो सक्ता है, सत्य सर्व्वशक्तिमान हैं। सत्य ही निराकार से साकार, साकार से निराकार, या कारण से सूक्ष्म, सूक्ष्म से स्थूल, नाना नामरूप चराचर स्त्री पुरुष जीव समुह को लेके असीम अखण्डाकार सर्व्वव्यापी निर्व्विशेष पूर्णरूप से प्रकाशमान हैं।

यही पूर्णरूप प्रकाश से विभिन्न समाज वो विभिन्न मत में नाना नाम कल्पित हुई है। परन्तु इन्ही सर्व्व काल में जो हैं वही पूर्णरूप से विराजमान हैं। यही पूर्ण शब्द में दो शब्द शस्त्र वो लोग व्यवहार में प्रचलित है। एक निराकार निर्गुण अप्रकाश और एक साकार सगुण प्रकाशमान हैं। निराकार अदृश्य भाव से रहते हैं देख नही पड़ते, साकार प्रत्यक्ष, दृश्य-मान अथच मनुष्य इनको चिन्हने या जानने नहीं सक्ते। इन्ही दया करने से तब इनको वो अपने को चिन्हा जाता है।

यही मङ्गलकारी ओंकार विराट परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण चराचर को लेके पूर्णरूप से प्रकाशमान हैं। इन्ही को विश्वनाथ, विष्णु भगवान, गनेश, काली, दुर्गा, सरस्वती, सावित्री देवी माता, सूर्य्यनारायण ओंकार प्रभृति नाना नाम कल्पित हुई है। यही मङ्गलकारी ओंकार विराट परब्रह्म चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप जगत के माता पिता गुरु आत्मा इनसे जीव समुह के उत्पत्ति, पालन, वो स्थिति और इनके सिवाये इस आकाश मन्दिर में जीव के अमङ्गलामङ्गलकारी द्वितीय कोई हुये नही, होगी नही होने का सम्भावना भी

नहीं है। इन्हीं को चिन्ह के इनकी निकट क्षमा भिर्चा वो शरण प्रार्थना पूर्व्वक इनकी प्रिय कार्य्य साधन करिये। इन्हीं को भक्ति पूर्व्वक उदय अस्त में नमस्कार प्रणाम या दण्डवत् करना और ओंकार मन्त्र, अपना, वो गुरु के रूप ज्योतिः हैं यही जानके "ओंसत्गुरु" मन्त्र को जपना जीव समुह को सत् भाव से एक मत होके परस्पर का प्रतिपालन वो मङ्गलचेष्टा नित्य अग्नि में उत्तम उत्तम पदार्थ का आहुति स्वयं दिजिये वो अपर से दिलाईये और ब्रह्माण्ड को परिस्कार रखना यही इनकी प्रिय कार्य्य हैं।

जीव मात्रहो को अपने आत्मा परमात्मा का स्वरूप जानके आहार देना वो अग्नि में आहुति देना ही भगवान की पुजा वो उनके भोग है यह ध्रुव सत्य जानेंगे। इसके बिपरीत व्यवहार करने से जगत का अमङ्गल घटा हैं, घटता है वो घटेगा। पण्डितगण जानते हैं कि, "अग्निमुखे देवाः खादन्ति" अर्थात् भगवान पूर्णरूप से अग्नि मुह से आहार करते हैं। सर्व्वप्रकार का भोजन की सामग्री, शरीर, मन, वस्त्र, शय्या, गृह, रस्ता, घाट इत्यादि परिस्कार परिच्छन्न रखेंगे। इसके सिवाये मिथ्या कल्पना करके स्वयं कष्ट भोग नहीं करना और दूसरे को भी कष्ट नहीं देना। इसके सिवाये आड़म्बर करने से अथवा यही कार्य्यों से विमुख रहने से कभी भी मङ्गल नहीं होगा और भगवान के निकट दोषी होने होगा। यह ध्रुव सत्य सत्य जानेंगे।

ओं शान्तिः ओं शान्तिः ओं शान्तिः।

सम्पूर्ण।

प्रभाती ।

ज्ञान ज्योति जग उदय भये हैं, उठहु सन्त सुजाना ।
मोह निशा अवसान भई है, तम अज्ञान नसाना ॥ १ ॥
साधु सन्त योगी सन्यासी, उठो भई है विहाना ।
भ्रम निद्रा में सोई रहो हैं, क्या निंद में अलसाना ॥ २ ॥
जटाजुट कि भेख आड़म्बर, स्वप्न में हि लोभाना ।
जाचित दिवश तेज ज्योति: की, ज्ञान पाई लजाना ॥ ३ ॥
विविध सम्प्रदा तिमिर मतछाई, देश विदेश में नाना ।
परम हंस शिव सरण तिहारो, गांउ प्रभा रस साना ॥ ४ ॥

तोटक ।

सत शुद्ध हि चेतन ज्योति प्रभो । जगदातमरूप हि तेज विभो ॥
रवि ज्योति अनादि विराजत हैं । प्रभु द्युति सदाहि प्रकाशत है ॥
प्रभु की महिमा अब काहि कहो । ऋषि मूनि न पावहि थाह अहो ॥
प्रभु नाम अनाम रहे जग में । ऋषि मूनि हि कल्पिधरे मनमें ॥
शिव शङ्कर गौरि गनेश खुदा । गड कालि इश भगवान सुधा ॥
हरि राम सिता जगदीश रमा । बहु नाम अनन्त न लेख गणा ॥
जिमि धारहि नाम अनेक धरे । बहु देश हि में बहु नाम करे ॥
जल नीर शलील तनो सरिता । लिलु जीवन वाटर आव यथा ॥
पर नाम जपे जल पाव नहीं । जल पान किये बिनु शान्ति नहीं ॥
अस जानि जिये भजु ज्योति सवे । सिध होइ रहीं सब काम तवे ॥
जग जीवन मुक्ति हि पावहुगे । भ्रम मोह अज्ञान नशावहुंगे ॥
प्रभु सत्य विराट अनादि हि हैं । वह ओम सगूण हि रूप अहै ॥

खिति वारि समीर अकाश लिये । रवि अग्नि शशी मिलि ओम भये ॥
यहि अंग प्रतंग विराट लिये । सब जीव चराचर सृष्टि किये ॥
जग जीव सबै इक ओम हि है । प्रभु रूप विराट हि ओम हि है ॥
अरु कारण सूक्ष्म ओम हि हैं । अरु स्थूल चराचर ओम हि हैं ॥
जनु ओम हि निर्गुण बीज अहै । जग वृक्ष सगूण प्रसार रहैं ॥
फल फूल हि रूप चराचर हैं । जग रूप हि ओम विराट हि हैं ॥
गुरु मातु पिता सब ओम हि हैं । सुत नारि चराचर ओम हि हैं ॥
यह दास गुपाल विचार कहै । जग देख रहो सब ओम हि है ॥

दो० । ओम् नाम जग सत्य हैं, ओम् हि जगदाधार ।
ओम् चराचर रूप धरि, लीला करत अपार ॥

ओं शान्तिः ओं शान्तिः ओं शान्तिः ।

शुद्धाशुद्ध पत्र ।

पृष्ठा	पंक्ति	अ०	शु०
३	१०	अर्थात्	अर्थात
४	२१	वो	वो
५	११	दहिन	दहिने
,,	१३	ठाका	ढाका
,,	२३	सबजा	सबजो
,,	,,	(अज्ञा-"काइ" नत)	(अज्ञानता काई)
८	९	प्रथक	पृथक
,,	१६	विराठ	विराट
,,	१८	निरकार	निराकार
११	३	दृष्टान्त	दृष्टान्त
१२	१	उपसना	उपासना
,,	,,	मनुष्य	मनुष्य
१४	४	नाथि	नास्तिक
१६	२१	उथत	उठता
२२	५	पड़ी	पड़ी
२७	६	स्वरू	स्वरूप
२८	११	पगन्ददुरु	पगदगुरु
३२	६	विशय	विषय
३६	४	अलस्थापन्न	अवस्थापन्न
,,	१८	ईष्टदेवता	इष्टदेवता
३७	१७	विराच	विराट
,,	२३	विरट	विराट
३८	६	विरट	विराट
३९	११	खुरु	कुरु
४२	१५	सुपुष्टि	सुषुप्ति
५१	४	ठौर	और

पृष्ठा	पंक्ति	अ०	शु०
५५	२१	दैखिते	देखते
६२	१२	ब्रह्मण	ब्राह्मण
६९	२	निद्दष्ट	निर्द्दिष्ट
८२	१४	द्वारा	द्वारा
,,	१९	निर्द्दय	निर्देश
८३	३	है	हैं
९	२०	प्रकाशभान	प्रकाशमान
१०१	१५	दशन	दर्शन
१०६	१८	भ,	म,
११०	१५	भिश्रा	भिखा
१११	१	रसते	रहते
११२	१५	सूर्य्यंसारयण	सूर्य्यनारायण
११५	१०	इन्ही	इन्हीं
११९	५	मर्मों	मर्गों
१२५	६	तीसिहो	तैसिहो
,,	१८	भन्त्र	मन्त्र
,,	,,	भन्त्र	मन्त्र
१३०	३	होव हो	हो वहो
,,	२१	षाप	पाप
१३२	२४	पलोग	आपलोग
१३८	१९	फुइ	हुई
१५३	१०	विभुख	विमुख
१५९	२	ममचाति	मचाति
१७७	९	क्षरि	क्षुरि
१७८	१६	वीधर	वधीर